Postal Reg. No. M.P./Bhopal/4-340/2017-19
R.N.I.No. 51966/1989,ISSN 2455-2399
Date of Publication 15th July 2017
Date of posting April 2018

अप्रैल 2018 • वर्ष 30 • अंक 4 • मूल्य ₹ 40

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका

कार्टोसेट: सैन्य निरीक्षण क्षमताओं में इजाफा

मृत सागर : जहाँ डूबना असंभव

- साँस : क्यों और कैसे लेते हैं?
- ई-वेस्ट का साइलेंट खतरा

RNI No. 51966/1989
ISSN 2455-2399
www.electroniki.com
अप्रैल 2018
वर्ष 30
अंक 4

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका

राष्ट्रीय राजभाषा शील्ड सम्मान, रामेश्वर गुरु पुरस्कार, भारतेन्दु पुरस्कार तथा सारस्वत सम्मान से सम्मानित

सलाहकार मण्डल
शरदचंद्र बेहार, डॉ. वि.दि. गर्दे, देवेन्द्र मेवाड़ी, मनोज पटैरिया,
डॉ. संध्या चतुर्वेदी, प्रो. विजयकांत वर्मा, डॉ. रविप्रकाश दुबे,
डॉ.अशोक कुमार ग्वाल, डॉ.आर.एन.यादव, डॉ.आर.के.पांडे

संपादक
संतोष चौबे

कार्यकारी संपादक
विनीता चौबे

उप–संपादक
पुष्पा असिवाल

सह–संपादक
मोहन सगोरिया, रवीन्द्र जैन, मनीष श्रीवास्तव

संस्थागत सहयोग
अमिताभ सक्सेना, गौरव शुक्ला, डॉ. राघव, डॉ. विजय सिंह,
डॉ. अनुराग सीठा, डॉ. सत्येन्द्र खरे, संतोष शुक्ला, डॉ. सीतेश सिन्हा,
डॉ. मुनीष गोविन्द

राज्य प्रसार समन्वयक
शशिकांत वर्मा, लातूर सिंह वर्मा, लियाक़त अली खोखर, राजेश शुक्ला,
दर्शन व्यास, शलभ नेपालिया, अंबरीष कुमार, ए.के.सिंह, हरीश कुमार पहारे,
निशांत श्रीवास्तव, रजत चतुर्वेदी, अजीत चतुर्वेदी, अमिताभ गांगुली, नरेन्द्र कुमार,

क्षेत्रीय प्रसार समन्वयक
राजीव चौबे, जितेन्द्र पांडे, लुकमान मसूद,
आर.के. भारद्वाज, रवि चतुर्वेदी, प्रवीण तिवारी,
अरुण साहू, अभिषेक अवस्थी, विजय श्रीवास्तव, के.आई. जावेद,
असीम सरकार, अमृतेष कुमार, योगेश मिश्रा, मनीष खरे, आबिद
हुसैन भट्ट, दलजीत सिंह, कुम्भलाल यादव, संतोष उपाध्याय

समन्वयक प्रचार एवं विज्ञापन
राजेश पंडा

आवरण एवं डिजाइन
वंदना श्रीवास्तव, अमित सोनी

सार्थक विज्ञान केवल धन खर्च करके, प्रयोगशालाओं की शुरुआत या आदेश जारी करके नहीं पैदा किया जा सकता। अधिक महत्वपूर्ण यह है कि उसमें मानवीय तत्व का समावेश हो लेकिन अगर मात्रात्मकता गुणवत्ता पर हावी रहती है तो त्रासदी होगी।

– डॉ.सी.वी.रमन

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए 285

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका

क्रम

विशेष

शिक्षा अर्थात कला-कौशल शिक्षा
- मुकुल कानिटकर /05

विज्ञान वार्ता

भाषायी विविधता : विज्ञान संचार में बड़ी चुनौती
- वी.एस.एस. शास्त्री से डॉ.मनीष मोहन गोरे की बातचीत /09

ओरिगेमी : पेपर फोल्डिंग का अनोखा विज्ञान
- वी.एस.एस. शास्त्री /12

विज्ञान आलेख

न्यूट्रिनो आब्जर्वेटरी
- डॉ.कपूरमल जैन/14

साँस : क्यों और कैसे लेते हैं?
- सुभाषचंद लखेड़ा/18

ई-वेस्ट का साइलेंट खतरा
- विजन कुमार पांडेय/22

अब युद्ध भी हो गए हैं हाईटेक
- विनीता सिंघल/25

मृत सागर : जहाँ डूबना असंभव
- राजदीप /32

अंतरिक्ष और सैन्य विज्ञान

31 उपग्रहों का सफल प्रमोचन
- कालीशंकर /35

कार्टोसेट : सैन्य निरीक्षण क्षमताओं में इजाफा
- शशांक द्विवेदी /39

ब्रह्मोस : वायुसेना हुई और भी ताकतवर
- ज़ाहिद खान /41

विज्ञान कथा

मनुष्य
- लक्ष्मीकांत जवणे /43

कॅरियर

मौसम विज्ञान
- संजय गोस्वामी /46

विज्ञान इस माह

ज़िन्दगी जीने के लिए
- इरफान ह्यूमन /49

गतिविधि /55

पत्र व्यवहार का पता

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

आईसेक्ट लिमिटेड, स्कोप कैम्पस, एन.एच.–12, होशंगाबाद रोड, मिसरोद, भोपाल–462047

फोन : 0755-6766166 (डेस्क), 0755-6766101, 0755-2432801 (रिसेप्शन), 0755-6766110(फैक्स)

e-mail : electroniki@electroniki.com, website : www.electroniki.com वार्षिक शुल्क : 480/- प्रति अंक : 40/-

'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार संबंधित लेखक के हैं। उनसे संपादक की सहमति होना आवश्यक नहीं है।

सभी विवादों का निबटारा भोपाल अदालत में किया जायेगा।

स्वामी, आईसेक्ट लिमिटेड के लिये प्रकाशक व मुद्रक सिद्धार्थ चतुर्वेदी द्वारा पहले-पहल प्रिंटरी, 25 ए, प्रेस कॉम्प्लेक्स, जोन-1, एम.पी.नगर, भोपाल (म.प्र.) से मुद्रित व आईसेक्ट लिमिटेड, स्कोप कैम्पस एन.एच.-12 होशंगाबाद रोड, मिसरोद, भोपाल (म.प्र.) से प्रकाशित। संपादक- संतोष चौबे।

विशेष

शिक्षा अर्थात कला-कौशल शिक्षा

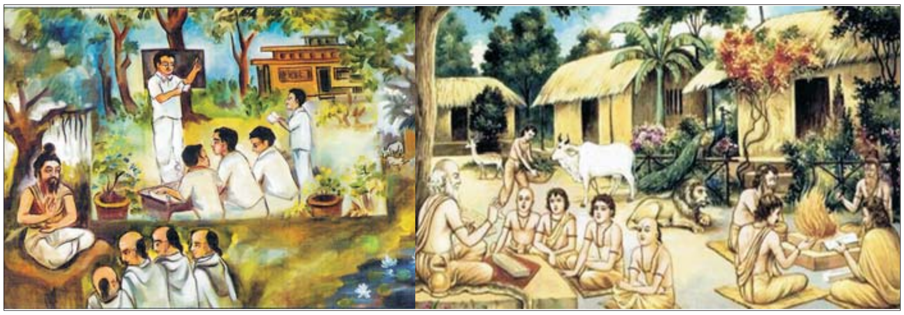

मुकुल कानिटकर

शिक्षाशास्त्र में प्रगति होने के पश्चात वह पुनः घूम फिरकर अपने प्राचीन सिद्धांतों की ओर जा रहा है। ज्ञान रचनावाद के नाम से केवल जानकारी के स्थान पर विषय को पूर्णतः समझने वाला ज्ञान किस प्रकार महत्वपूर्ण है यह बात आधुनिक शिक्षा शास्त्रज्ञों को अनेक प्रयोग असफल होने पर ज्ञात हुआ। भारतीय परंपरा में अनुभूति से प्राप्त होने वाले ज्ञान को ही ज्ञान की संज्ञा दी जाती थी। किसी भी विषय की केवल जानकारी एकत्रित करना ज्ञान नहीं होता यह भारत में प्राचीन काल से ही स्पष्ट था। पश्चिम आधारित शिक्षाशास्त्र के विचारकों को ये बातें अब समझ में आने लगी हैं। भारत में ज्ञान के लिए 14, कहीं-कहीं 16 विद्याओं का विचार किया जाता था। जीवन को समझने का ज्ञान इन विद्याओं में था। प्राचीन शिक्षा व्यवस्था में इन विद्याओं के साथ-साथ शिक्षाशास्त्र में 64 कलाओं का महत्व प्रारंभ से ही हमें दिखाई देता है।

आधुनिक शिक्षाशास्त्र में ज्ञान के साथ ही व्यवहार में भी शिक्षा का असर होता है यह बात समझने में भी कई साल लग गए। अब शिक्षाशास्त्रियों में ऐसा विचार आया कि शिक्षा का उद्देश्य विद्यार्थियों का सामाजिक व्यवहार ठीक करना, social behavior बदलना भी है। उससे आगे बढ़कर तीसरा विचार भी इसमें जोड़ दिया है - Knowledge, Behavior & Skill अर्थात ज्ञान, आचरण और कौशल। जीवन में कैसे जिये, जीने के लिए आवश्यक कौशल्य ये भी शिक्षा के महत्वपूर्ण अंग हैं यह अब शिक्षाविदों को भी अब समझ में आ रहा है। भारत में शिक्षा का समग्र विचार करते समय जीवन की समग्र संरचना का विचार किया गया। शिक्षा की पाठ्यवस्तु में विद्या, संस्कार और कला इन तीनों का समावेश पहले से ही था। इसलिए कौशल शिक्षा पर विचार करते समय भारतीय दृष्टिकोण से यह समझने हेतु कला शिक्षा का विचार करना होगा। क्योंकि भारत में हम कला-कौशल ऐसा ही शब्द प्रयोग करते हैं।

विद्या के लिए शब्दों की व्युत्पत्ति एवं उसका शास्त्र यह एक महत्वपूर्ण वेदांग आवश्यक माना गया है। छह वेदांगों में से 'निरुक्त' ने प्रत्येक शब्द की व्युत्पत्ति पर ध्यान दिया। आज भी कोई संकल्पना यदि मूल से समझनी हो तो उस शब्द की व्युत्पत्ति कहाँ से हुई, वह शब्द कहाँ से आया, उस शब्द का मूल अर्थ क्या है यह समझना आवश्यक है। इसलिए इस लेख में हम 'कुशल' या 'कौशल्य' इस शब्द के मूल का प्रथम विचार करेंगे और बाद में भारत में इस बात का जो पारंपरिक नाम है, अर्थात कला शिक्षा, उस कला शब्द का अर्थ भी समझने का प्रयत्न करेंगे। उसमें आधुनिक कौशल शिक्षा की स्पष्ट भूमिका अपने मन में तैयार हो पायेगी।

हम सभी स्किल शब्द के लिए कुशल या कौशल्य इस शब्द का प्रयोग सहजता से करते हैं किंतु कुशलता का अर्थ क्या है? कौशल्य का अर्थ क्या है? यह कुशल शब्द कहाँ से आया यह विचार अधिक नहीं किया जाता। भारतीय परंपरा में कर्मकांड का बहुत महत्व है और उस कर्मकांड के लिए सामग्री का विचार वैज्ञानिक पद्धति से, सूक्ष्म रीति से किया जाता था। उपासना के लिए हो, पूजन के लिए हो या यज्ञ में यजन करने के लिए हो उस सामग्री में बैठने का आसन यह बहुत महत्वपूर्ण था। क्योंकि उस आसन से ही प्राण उर्जा का रक्षण किया जाता था। आज आधुनिक फिजिक्स में जिसे 'अर्थिंग' कहते हैं, उर्जा पृथ्वी में निकल जाना, ऐसा न हो इसलिए अलग-अलग प्रकार के आसनों पर बहुत अधिक वैज्ञानिक संशोधन करके अपने प्राचीन ऋषियों ने कुछ आसन तय किये। यज्ञ विधि में सर्वाधिक उपयोग में आने वाला आसन कुशासन था। कुश नाम की एक घास, उस घास का प्राणतत्व, उसकी सात्विकता को ध्यान में रखते हुए कुश के आसन और केवल

आसन ही नहीं, कुश के माध्यम से यज्ञ के विभिन्न उपकरण तैयार करने की विधि बहुत पहले से प्रचलित थी। यह कुश नाम की एक विशिष्ट प्रकार की घास जंगल में उगती थी। उसे खेती में स्वयं नहीं उगाते थे। नैसर्गिक पद्धति से, प्रतिप्रदत्त कुश का ही आसन के लिए व विभिन्न यज्ञ सामग्री के लिए प्रयोग किया जाता था। उस कुश को मूल से उखाड़कर निकाला जाता था। खंडित, कटे हुए कुश नहीं चलते। इसलिए कुश घास जंगल से उखाड़कर लाना यह भी एक महत्वपूर्ण विधि वैदिक काल से भारत में प्रचलित थी। विशिष्ट नक्षत्र में ही उस कुश नाम की घास को उखाड़ने की परंपरा थी। क्योंकि उसी समय जमीन की स्थिति ऐसी होती थी जिसमें उसे उखाड़ना सरल होता था।

कुश नाम की एक विशिष्ट प्रकार की घास जंगल में उगती थी। उसे खेती में स्वयं नहीं उगाते थे। नैसर्गिक पद्धति से, प्रतिप्रदत्त कुश का ही आसन के लिए व विभिन्न यज्ञ सामग्री के लिए प्रयोग किया जाता था। उस कुश को मूल से उखाड़कर निकाला जाता था। खंडित, कटे हुए कुश नहीं चलते। इसलिए कुश घास जंगल से उखाड़कर लाना यह भी एक महत्वपूर्ण विधि वैदिक काल से भारत में प्रचलित थी। विशिष्ट नक्षत्र में ही उस कुश नाम की घास को उखाड़ने की परंपरा थी। क्योंकि उसी समय जमीन की स्थिति ऐसी होती थी जिसमें उसे उखाड़ना सरल होता था।

यह कुश नाम की घास अत्यंत तीक्ष्ण, सूक्ष्म और कड़क होने के कारण धारदार सुई जैसी इसकी पाती होती है। जो यज्ञ करेगा वही ऋत्विक, वही यजमान स्वयं जाकर यह कुश नाम की घास को जंगल से उखाड़कर लाएगा यह परंपरा थी। छोटे बालकों को 12 साल की उम्र से ही कुश कैसे उखाड़ना यह सिखाया जाता था। उस कुश को उखाड़ने की एक विशिष्ट तरीका था। उस तरीके से कुश उखाड़ने से हाथ कटने का भय नहीं रहता था। अन्यथा इस नुकीली कुश से हाथ कटकर रक्तरंजित होने की संभावना होती थी। यदि रक्त बहा तो वह कुश अपवित्र हो गया और वह यज्ञ में प्रयोग करने लायक नहीं रहा। यदि समूल उखाड़ा नहीं गया और बीच से ही टूट गया तब भी वह काम का नहीं रहेगा, और फिर वह नक्षत्र एक साल बाद ही आएगा इसलिए पूरे वर्षभर के लिए कुश नाम की सामग्री घर में अग्निहोत्रादि यज्ञ के लिए उपलब्ध नहीं होगी। ऐसी स्थिति होती थी। इसलिए उस विशिष्ट नक्षत्र में विशिष्ट स्थान पर जाकर कुश नाम की घास को आवश्यकतानुरूप व्यवस्थित, रक्त न बहते हुए समूल उखाड़ना यह एक अत्यंत महत्वपूर्ण कार्य था। वह प्रत्येक घर के बालक को सीखना होता था। इस कार्य को जो अपने शरीर को बिना नुकसान पहुंचाए व्यवस्थित करेगा, उसे कुशल कहा जाता था।

कुश का प्रयोग कर सकता है इसलिए वह कुशल। इन्द्रियों का आपस में समन्वित प्रयत्न आवश्यक होता है। कान, आँख और हाथ-पाँव इन सबका प्रयोग, उसके लिए लगने वाली उर्जा, शक्ति, बल, चपलता इन सबका समन्वय होकर ही यह संभव हो पाता था। इसलिए इस कुश को उखाड़ने के कार्य के लिए विद्यार्थियों अथवा छोटे बालक को अपनी समग्र इन्द्रियों का समन्वित विकास करना पड़ता था। इस हेतु वह प्रयत्नरत होता था। कुश जो व्यवस्थित प्रयोग कर पाए उसे कुशल कहा जाता था। केवल उखाड़कर ले आने तक ही नहीं, बाद में उसका आसन बनाते समय भी वह उँगलियों में वह कुश घुसने तक न देते हुए (क्योंकि उस कुश का जो अग्रभाग है वह अत्यंत सूक्ष्म और धारदार होता है)। इसलिए बुद्धि के लिए हम एक विशेषण आज भी प्रयोग करते है 'कुशाग्रबुद्धि'। कुशाग्रबुद्धि मतलब कुश के अग्र भाग जैसी बुद्धि। ऐसी सूक्ष्म और धारवाली बुद्धि जो विश्लेषण कर सकती है, छोटे-छोटे फरक को भी विश्लेषणात्मक दृष्टि से देख सकती है, छोटा सा बदलाव भी जिसकी दृष्टि से छूटता नहीं उसकी बुद्धि कुशाग्र। ऐसा यह कुश शब्द से आया हुआ 'कुशल' या 'कौशल'। अर्थात स्वयं को तकलीफ न होने देते हुए सामने रखा लक्ष्य व्यवस्थित पूरा करने का हुनर इसे कौशल कहा जाये।

यह कौशल शब्द की व्याख्या हुई। आज हम मजदूरी के लिए लगने वाला जो कोई हुनर है, जो थोड़े अभ्यास से आ सकता है वह प्लंबिंग, इलेक्ट्रिक फिटिंग आदि को कौशल कहा जाने लगा। ये तभी कौशल माने जा सकते हैं यदि सर्वश्रेष्ठ, परफेक्ट, त्रुटिहीन तरीके से सहजता से कम उर्जा का प्रयोग करने की आदत डालकर प्रयोग करें। तब इसे कौशल प्रशिक्षण कह सकते है। जीवन में कैसे जिए यह 'जीवन कौशल', कैसे बोले, कैसे अपने सटीक विचार व्यक्त करें, जिस प्रकार कुश को उखाड़ने के लिए मन को एकाग्र किया जाता

उसी प्रकार से अपने विचार स्पष्टता से व्यक्त करना यह 'अभिव्यक्ति कौशल्य'। ऐसा प्रत्येक क्षेत्र में इस कौशल शब्द का प्रयोग किया जा सकता है। इसलिए आज लाइफ स्किल्स, जीवन कौशल्य और काम करने के लिए विभिन्न प्रकार के कौशल्य इस प्रकार से कौशल्य शब्द का प्रयोग किया जाता है। भाषा में कौशल्य, जिसके लिए लैंग्वेज स्किल्स, भाषा कौशल्य ऐसा शब्द प्रयोग किया जाता है। इन सबको शिक्षा में एक महत्वपूर्ण स्थान मिले ऐसा भी प्रयास चल रहा है।

दो तरीकों से आजकल कौशल शिक्षा की ओर देखा जाता है। एक तो औपचारिक शिक्षा से शालाबाह्य विद्यार्थियों को जीवन में अपने पैरों पर खड़े हो पाए इसलिए कुछ स्वावलंबन के कौशल सिखाना, जिससे वो अपने जीवन में नौकरी या स्वयं का व्यवसाय कर पाए इस हेतु 'स्किल डेवलपमेंट' (कौशल विकास) इस नाम से अनेक पाठ्यक्रम प्रारंभ किये गए। किन्तु इससे अधिक महत्वपूर्ण है प्रत्येक औपचारिक शिक्षा पद्धति में पढने वाले विद्यार्थी को अपनी समग्र शिक्षा के लिए अपना जीवन आनंद से जीने का कौशल सिखाया जाये। इसलिए हर एक को कौशल शिक्षा उपलब्ध हो यह विषय है। कौशल विकास शालाबाह्य विद्यार्थियों के लिए हो तब भी कौशल शिक्षा यह प्रत्येक विद्यार्थी के लिए हो सकता है। शालाबाह्य विद्यार्थियों के लिए भी एक-दो कौशल न सिखाते हुए पूरी तरह से जीवन जीने का कौशल भी उसके साथ सिखाया जाये। फ़िटर या बिजली या प्लंबिंग का कार्य सीखने वाले विद्यार्थी को उसके साथ ही व्यापार कैसे किया जाये, हिसाब कैसे रखा रखा जाये, व्यापार में नैतिक मूल्य कैसे रखें ये सारे विषय यदि सिखाया गया तो कौशल विकास का जो पाठ्यक्रम है वह भी कौशल शिक्षा का पाठ्यक्रम हो सकता है।

भारतीय शिक्षा शास्त्र में शिक्षा के पाठ्यक्रम में तीन प्रकार की कलाओं का प्रयोग किया जाता था। जिसे आजकल 'कला' इस शब्द से पहचाना जाता है वह अभिव्यक्ति कला। संगीत, नृत्य, गायन, वादन, चित्र, नाट्य, शिल्प ऐसी जो भी कलाएं हैं वे मन की भावनाओं को अभिव्यक्त करने वाली कलाएं अर्थात 'अभिव्यक्ति कला' इस नाम से जानी जाती है। दूसरे प्रकार की अन्य कलाएं जो इन 64 कलाओं में हमें मिलती है वे स्वावलंबन की कलाएं हैं।

भारतीय परंपरा में इसे 'कला शिक्षा' कहा जाता था। इसलिए 64 कलाओं का प्रयोग शिक्षा में महत्वपूर्ण है। प्रत्येक विद्यार्थी को 64 कलाओं में से अधिक से अधिक आनी चाहिए। इसलिए विभिन्न प्रकार की कलाओं का प्रयोग शिक्षा में, पाठ्यक्रम में किया जाता था।

कला शब्द का अर्थ भी वर्त्तमान परिस्थिति में आधा-अधूरा है। भारतीय शिक्षा शास्त्र में शिक्षा के पाठ्यक्रम में तीन प्रकार की कलाओं का प्रयोग किया जाता था। जिसे आजकल 'कला' इस शब्द से पहचाना जाता है वह अभिव्यक्ति कला। संगीत, नृत्य, गायन, वादन, चित्र, नाट्य, शिल्प ऐसी जो भी कलाएं हैं वे मन की भावनाओं को अभिव्यक्त करने वाली कलाएं अर्थात 'अभिव्यक्ति कला' इस नाम से जानी जाती है। दूसरे प्रकार की अन्य कलाएं जो इन 64 कलाओं में हमें मिलती है वे स्वावलंबन की कलाएं हैं। मैं भोजन करता हूँ तो भोजन बनाना मुझे आना चाहिए इसलिए 'पाक कला'। कपड़े पहनता हूँ तो कपड़े सीना मुझे आना ही चाहिए इसलिए 'वस्त्र निर्माण कला'। ऐसे ही कृषि से लेकर अन्य सभी प्रकार के कार्यकलाप ये स्वावलंबन कला में आते हैं। उसी प्रकार तीसरे प्रकार की कला जिसे धनुर्वेद भी कहा जाता है वह है 'युद्ध कला'। शारीरिक क्षमता के साथ ही ज्ञानेंद्रिय एवं कर्मेंद्रिय का योग्य समन्वय साधते हुए आत्मरक्षण करना तथा आवश्यकता पड़ने पर शत्रु का नाश करने के लिए भी उपयोग करना। इस प्रकार की जो कलाएं हैं वे 'युद्ध कला'। अश्वारोहण, मलखम्ब, नियुद्ध, शस्त्रसंचालन इस प्रकार की कलाएं जिसके अंतर्गत आती हैं उन्हें युद्ध कला कहा जाता है।

ऐसे तीन प्रकार की कलाओं का समावेश भारतीय गुरुकुल पद्धति की शिक्षा में होता था। आजकल इनमें से केवल अभिव्यक्ति कलाओं को ही कला समझा जाता है और बाकि की कलाओं का विचार नहीं किया जाता। इनका भी शिक्षा में स्थान मौलिक ना होकर केवल पाठयेतर गतिविधि के रूप में है। अतः जिन विद्यालयों तथा अभिभावकों को इसका व्यक्तित्व विकास में महत्व ज्ञात नहीं है वहाँ कला शिक्षा क्रीडा शिक्षा के समान ही ना के बराबर हो

स्वामी विवेकानंद शिक्षा की व्याख्या करते हुए कहते हैं, “शिक्षा का अर्थ है प्रत्येक मनुष्य में विद्यमान पूर्णत्व की अभिव्यक्ति करना, प्रकटीकरण करना”। पूर्णत्व प्रत्येक में जन्मतः विद्यमान होता है, बीजरुप में विद्यमान होता है। शिक्षा के माध्यम से उसे केवल बाहर प्रकट करना यह उसके पीछे का छुपा अर्थ है। बाहर से कोई जानकारी ठूंसना शिक्षा न होकर अंदर पहले से विद्यमान पूर्णत्व को बाहर प्रकट करना है। इस व्याख्या को यदि हम समझने का प्रयास करें तब हमें कला शिक्षा का अर्थ समझ में आएगा।

गयी है। स्वावलंबन कला में जो विषय आते हैं वे सभी विषय वर्तमान व्यवस्था में ‘कौशल’ नाम से जाने जाते हैं। कौशल शिक्षा या कौशल विकास में इन्हीं स्वावलंबन कलाओं का विकास किया जाता है। इसलिए भारतीय दृष्टिकोण से कौशल शिक्षा यदि समझनी हो तो कला को समझना आवश्यक है।

कला शब्द का अर्थ यदि हमने निरुक्त पद्धति से ही समझने का प्रयास किया तो कला शिक्षा से क्या अभिप्राय है यह हमें समझ में आएगा। जिस प्रकार आर्ट के लिए कला इस शब्द का प्रयोग किया जाता है उसी प्रकार कला शब्द का प्रयोग अन्य स्थानों पर कहाँ-कहाँ किया जाता है इस पर भी विचार किया जाना चाहिए। तब हमें इसका अर्थ समझ में आएगा। हम सभी भारतीय चांद्रमासीय कालगणना जानते हैं। उस चांद्र मासीय कल गणना में शुक्लपक्ष व कृष्णपक्ष और उस पक्ष की विभिन्न तिथियों का प्रयोग होता है। यदि हम सोचे कि प्रतिपदा का चंद्र और द्वितीया का चंद्र यह अंतर क्यों है? तो उन्हें हम चंद्र की कला कहते हैं। कला का अर्थ क्या है? पूरे चंद्र की जो छोटी सी छटा उस दिन प्रकाशमान होती है उसे हम कला कहते हैं। चंद्र छोटा नहीं हुआ है परंतु उस दिन हमें उतना ही चांद दिखाई देता है, पूरा चांद नहीं दिखता। इसलिए वह चन्द्रकला। पूर्णिमा का चंद्र पूरा चंद्र होता है। इसलिए उसे कला नहीं कह सकते। पूर्णत्व का जो भाग प्रकट होता है उसे कला कहते हैं।

भारतीय शिक्षाशास्त्र का सन्दर्भ लेकर यदि इस कला शब्द के अर्थ ‘पूर्ण का एक छोटा प्रकट भाग’ ऐसा हम समझ लें तो फिर 64 कलाओं की शिक्षा प्रत्येक मनुष्य को दिया जाना क्यों आवश्यक है यह हमारे ध्यान में आएगा। स्वामी विवेकानंद शिक्षा की व्याख्या करते हुए कहते हैं, “शिक्षा का अर्थ है प्रत्येक मनुष्य में विद्यमान पूर्णत्व की अभिव्यक्ति करना, प्रकटीकरण करना”। पूर्णत्व प्रत्येक में जन्मतः विद्यमान होता है, बीजरूप में विद्यमान होता है। शिक्षा के माध्यम से उसे केवल बाहर प्रकट करना यह उसके पीछे का छुपा अर्थ है। बाहर से कोई जानकारी ठूंसना शिक्षा न होकर अंदर पहले से विद्यमान पूर्णत्व को बाहर प्रकट करना है। इस व्याख्या को यदि हम समझने का प्रयास करें तब हमें कला शिक्षा का अर्थ समझ में आएगा। कला, फिर वह अभिव्यक्ति कला हो, स्वावलंबन कला हो या युद्ध कला हो, ये 64 कलाएं मनुष्य के पूर्णत्व की विविधरंगी छटा, उसके छोटे-छोटे भाग हैं। जिस प्रकार अष्टमी का चंद्र यह पूर्ण चंद्र का आधा भाग है उसी प्रकार संगीत, नृत्य, गायन, वादन, शिल्प, चित्र ये विभिन्न ज्ञानेंद्रियों की अभिव्यक्ति की कलाएं हैं। श्रवण इंद्रियों की अभिव्यक्ति संगीत, गायन-वादन के रूप से और चक्षवेंद्रियों के लिए शिल्प-चित्र आदि कला। इस प्रकार से प्रत्येक इंद्रिय का सुव्यवस्थित उपभोग करने के लिए कलाभिव्यक्ति। साथ ही स्वावलंबन की कलाएं ज्ञानेंद्रिय और कर्मेंद्रियों का परिपूर्ण प्रयोग। इसलिए मनुष्य के पूर्णत्व की अभिव्यक्ति करने के लिए सभी कलाओं का शिक्षा में प्रयोग होना आवश्यक है। कला शिक्षा यह शिक्षा का भाग न होकर कलाशिक्षा ही एक अर्थ में पूर्ण शिक्षा है। विद्या अर्थात ज्ञान और कला अर्थात जीवन के पूर्णत्व की व्यवहार में अभिव्यक्ति, व्यवहार में प्रकटीकरण। इसलिए कला शिक्षा के बिना शिक्षा का विचार ही नहीं किया जा सकता। इसलिए भारतीय दृष्टिकोण से आज उसी कला को यदि हम कौशल शिक्षा कहें तो कौशल शिक्षा यह शिक्षा का एक ऊपरी भाग न होकर शिक्षा का अविभाज्य अंग है। कौशल शिक्षा के बिना शिक्षा पूरी हो ही नहीं सकती। क्योंकि अपने जीवन के पूर्णत्व का प्रकटीकरण कौशल के माध्यम से ही प्रत्येक मनुष्य को करना होता है। इसलिए भारतीय दृष्टिकोण से 64 कलाओं की जो भूमिका शिक्षा में है वही युगानुकूल पद्धति से विचार करने पर कौशल शिक्षा की है ऐसा हम कह सकते हैं। इस अर्थ में कौशल शिक्षा को यदि हमें देखना हो तो कौशल शिक्षा के लिए एक समग्र और एकात्म नीति बनाया जा सकता है। ऐसी कौशल शिक्षा विकसित करने की दृष्टि से शिक्षा नीति पर समन्वय, समग्रता से विचार करना आवश्यक है। यदि भारतीय दृष्टिकोण से कला के रूप से कौशल शिक्षा का विचार किया जाने लगा तो आनंददायी शिक्षा का स्वप्न साकार हो पायेगा।

madhyanchal@gmail.com

❑❑❑

भाषायी विविधता

विज्ञान संचार में बड़ी चुनौती

वी.एस.एस.शास्त्री से डॉ.मनीष मोहन गोरे की बातचीत

आज हम एक ऐसे विज्ञान संचारक से वार्ता करने जा रहे हैं जो महान अंग्रेजी लेखक ओ.हेनरी के समान बैंक कर्मचारी रहे और रचनात्मक कार्य कर रहे हैं। भोपाल गैस त्रासदी के बाद लोगों में वैज्ञानिक चेतना के प्रसार के निमित्त चलाये गये विज्ञान जत्था से इनका उदय हुआ और इन्होंने इसी रेखा पर आगे बढ़ते हुए ओरिगेमी के जरिये अपनी एक अलग पहचान बनाई। इस विज्ञान संचारक का नाम है वी.एस.एस. शास्त्री। इन्होंने जब पाया कि भारत में विज्ञान और गणित के शिक्षकों को अपने शिक्षण के दौरान विद्यार्थियों को संकल्पना समझाने में कठिनाई होती है, तब कागज से बने मॉडल के माध्यम से इन्होंने इसका समाधान ढूंढ निकाला जिसे ओरिगेमी कहते हैं। इसके जरिये वे दसवीं तक के गणित पाठ्यक्रम को समझाने में कामयाब हो चुके हैं। कागज की एक नाव की सहायता से शास्त्री जी बच्चों को पाइथागोरस का प्रमेय सरलता से समझाते हैं और खेल-खेल में बच्चे गणित सीख जाते हैं। गणित और विज्ञान को दिलचस्प व मनोरंजक बनाने की दिशा में शास्त्री जी ने अहम भूमिका निभाई है। उनके इस अनोखे प्रयोग ने शिक्षकों और विद्यार्थियों की केवल पाठ्य पुस्तकों पर निर्भरता को कम किया है। ओरिगेमी और गणित के मेल से विज्ञान की समझ विकसित करने वाले शास्त्री जी देश के कोने-कोने में जाकर अभी तक लगभग 800 कार्यशालाओं में प्रशिक्षण दे चुके हैं। अनेक राज्यों के शैक्षिक पाठ्यक्रम में ओरिगेमी और दूसरे प्रकार के मॉडलों का समावेश भी किया जा चुका है। शास्त्री जी ने कुल 32 पुस्तकें लिखी हैं जिनमें से ओरिगेमी फन एंड मैथेमेटिक्स, जंतर मंतर और मेनी एप्रोचेस टू -1 x -1= +1 उनकी कुछ लोकप्रिय किताबें हैं। इतना नहीं, सबसे बड़ी संख्या में ओरिगेमी मॉडल निर्माण के लिए उन्हें साल 2011 में लिम्का बुक ऑफ रिकार्ड्स में भी शामिल किया जा चुका है। प्रस्तुत है विज्ञान संचारक वी.एस.एस. शास्त्री से विज्ञान संचार के विभिन्न पहलुओं पर हुई बातचीत के प्रमुख अंश।

समाज और देश के विकास में विज्ञान संचार की भूमिका को आप किस प्रकार देखते हैं?

भारत जैसे देश में विज्ञान संचार की भूमिका अहम है। हमारी पाँच हजार साल पुरानी सभ्यता है जो कि धर्म, जाति और अनेक प्रकार की असमानताओं पर आधारित है। हमारे समाज में विज्ञान को लेकर रूचि नहीं रही है। हमारे देश में तर्कवाद भी रहा है लेकिन औपनिवेशिक युग के बाद यहाँ पर विज्ञान और वैज्ञानिक गवेषणा का समावेश हुआ। हमारे देश में आजादी के बाद से लगातार अभी तक विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विकास पर काम किया गया। विज्ञान के साथ-साथ इसके जनमानस में प्रसार का दायित्व विज्ञान संचार गतिविधियों पर निर्भर

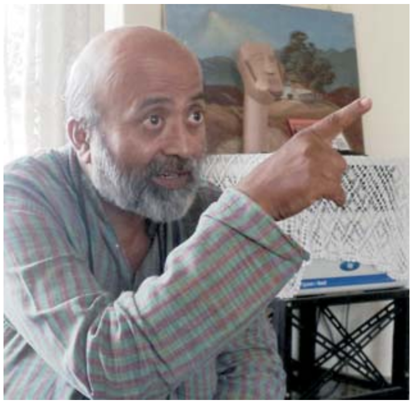

करता है। इस दिशा में भी हमारे देश में अनोखे और उल्लेखनीय कार्यों को अंजाम दिया गया है।

हमारे देश में विज्ञान लोकप्रियकरण के प्रयास में आप सबसे बड़ी चुनौती क्या महसूस करते हैं?

हमारे देश में भाषाई विविधता को मैं विज्ञान संचार की एक बड़ी चुनौती की तरह देखता हूं। सभी भाषाओं में एक समान वैज्ञानिक शब्दावली भी एक बड़ी समस्या है।

भारत के अंदर विज्ञान संचार अभियानों और प्रयासों को आप किस प्रकार देखते हैं?

इन तमाम वर्षों के दौरान विज्ञान संचार के क्षेत्र में निश्चित रूप से महत्वपूर्ण प्रगति दर्ज की गई है। समग्रता में देखा जाए तो देश के कई हिस्सों में इस दिशा में अपेक्षाकृत और भी प्रयास जरूरी हैं।

आपकी राय में भारत में विज्ञान संचार के क्या उद्देश्य हैं?

विज्ञान संचार का उद्देश्य भारतीय संविधान के अनुसार समाज और जनमानस में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास करना है। इसकी झलक हमारी शिक्षा, व्यवहार और आचरण में दिखाई देना चाहिए।

हमारे देश की अनेक उपलब्धियां हैं जिनमें से सूर्य ग्रहण अवलोकन को मैं सबसे प्रमुख उपलब्धि के तौर पर देखता हूं। इस तरह के विज्ञान संचार प्रयासों की सहायता से ग्रहण को लेकर लोगों के मन की भ्रांतियों को दूर किया जा सका है। चमत्कारों की वैज्ञानिक व्याख्या को भी एक महत्वपूर्ण उपलब्धि माना जा सकता है।

क्या विज्ञान संचार के प्रयासों के नतीजे के रूप में हमारे समाज से अंधविश्वास और अवैज्ञानिक व तर्कहीन परंपराओं को दूर किया जा सका है?

मेरी समझ से अभी हमारे देश से अंधविश्वास और अवैज्ञानिक परंपराओं को विज्ञान संचार के जरिए समाप्त नहीं किया जा सका है। लेकिन विज्ञान संचार के प्रयासों से इन अंधविश्वास के दुष्प्रभाव को कम हुए हैं।

भारतीय विज्ञान संचार की प्रमुख उपलब्धियों के बारे में कुछ कहें।

इस क्षेत्र में हमारे देश की अनेक उपलब्धियां हैं जिनमें से सूर्य ग्रहण अवलोकन को मैं सबसे प्रमुख उपलब्धि के तौर पर देखता हूं। इस तरह के विज्ञान संचार प्रयासों की सहायता से ग्रहण को लेकर लोगों के मन की भ्रांतियों को दूर किया जा सका है। चमत्कारों की वैज्ञानिक व्याख्या को भी एक महत्वपूर्ण उपलब्धि माना जा सकता है। कर्नाटक उच्च न्यायालय ने एक चमत्कार एक्सपोजर एक्टिविस्ट को गिरफ्तार करने वाले पुलिस सब इंस्पेक्टर को दंडित किया था। न्यायालय ने अपने बयान में कहा कि चमत्कार एक्टिविस्ट (विज्ञान संचारक) संविधान के मौलिक कर्तव्य का पालन कर रहा था (हुलिकल नटराज बनाम चिकमंगलूर पुलिस)।

क्या सरकारी एजेंसियों (केंद्रीय और राज्य) के कार्यक्रम व योजनाएं हर दृष्टि से विज्ञान संचार के लक्ष्यों की पूर्ति करने में सफल रहे हैं?

यह एक बहुत बड़ा लक्ष्य है जिसे पूरा करने में केंद्र और राज्य सरकारों की तमाम एजेंसियां लगातार काम कर रही हैं। इन प्रयासों में दोहराव से बचकर नये प्रयासों और विश्लेषण की आवश्यकता है।

विज्ञान संचार में और खास तौर पर बच्चों में ओरिगेमी प्रयोग को लेकर आपका व्यापक अनुभव है। इसकी मुख्य बातों और नतीजों पर कुछ बताएं।

विज्ञान संचार में दुर्भाग्य से गणित संचार की उपेक्षा हुई और इस दिशा में कुछ योगदान करने का मैंने प्रयास किया है। मैंने विद्यार्थियों और शिक्षकों की कठिनाई को दूर करने की

ओर कुछ कदम बढाए हैं। इसके अच्छे नतीजे देखने को मिले हैं जो मेरे और विज्ञान संचार की दृष्टि से बहुमूल्य हैं। गणितीय इकाई पाई के मान 22/7 को गतिविधि के माध्यम से निकालने का मैंने प्रयास किया है। संयोग से मैं अपनी कार्यशालाओं में प्रयोगों को दिखाने और समझाने के लिए केवल कागज का इस्तेमाल करता हूं जो कि सस्ता और हर जगह उपलब्ध होता है। ओरिगेमी एक ऐसा संचार टूल है जिसके द्वारा विज्ञान और गणित को लेकर बच्चों के मन का भय (फोबिया) निकल जाता है। मैंने गणित के कार्टून को लेकर भी लिखा है और इस विषय पर मेरी एक पुस्तक कर्नाटक राज्य विज्ञान परिषद् ने प्रकाशित भी किया है।

विज्ञान संचार की दिशा में आपकी भावी योजनाएं क्या हैं?

मैं निकट भविष्य में अपनी कार्यशालाओं से जुड़ी वीडियो यूट्यूब पर डालने की योजना बना रहा हूं। अगस्त्य इंटनेशनल के लिए गणित पार्क स्थापित करने की भी मेरी योजना है। विज्ञान पार्क की तर्ज पर यह दुनिया का पहला गणित पार्क होगा। इसके प्रवेश द्वार को गणित की इकाई 'पाई' के रूप में मैंने तैयार कर दिया है। यह बच्चों के लिए गणित के तीर्थ के समान होगा।

आपकी दृष्टि में समाज के किस समुदाय पर जाने-अनजाने में ध्यान नहीं दिया जाता रहा है? संक्षेप में इसकी आवश्यकता और महत्व को रेखांकित करें।

प्राथमिक और मिडिल स्कूल के विद्यार्थी सर्वाधिक उपेक्षित रह जाते हैं। इन पर ध्यान नहीं दिया जाता। इन बच्चों को खिलौने बेहद आकर्षित करते हैं। तो फिर क्यों नहीं गणित और विज्ञान को खिलौनों के माध्यम से समझाया जाए। खेल खेल में इन विषयों से जुड़ी मूलभूत संकल्पनाएं उनके दिमाग में बैठ जाएंगी। मैंने ऐसे अनेक खिलौना मॉडल विकसित किए हैं।

समृद्ध समुदाय के पास विज्ञान और गणित की शिक्षा प्राप्त करने हेतु आवश्यक साधन और सुविधाएं होती हैं। मगर सवाल वंचित और निर्धन व्यक्तियों तक ज्ञान–विज्ञान को पहुंचाने को लेकर है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी के माध्यम से ही वंचितों तक ज्ञान पहुँचाया जा सकता है तथा उन्हें समाज की मुख्य धारा में लाया जा सकता है। यहीं पर विज्ञान संचार की भूमिका सामने आती है।

हमारे देश के तेजी से बदलते हुए सामाजिक आर्थिक परिदृश्य में विज्ञान संचार की भूमिका को आप किस प्रकार देखते हैं?

समृद्ध समुदाय के पास विज्ञान और गणित की शिक्षा प्राप्त करने हेतु आवश्यक साधन और सुविधाएं होती हैं। मगर सवाल वंचित और निर्धन व्यक्तियों तक ज्ञान-विज्ञान को पहुँचाने को लेकर है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी के माध्यम से ही वंचितों तक ज्ञान पहुँचाया जा सकता है तथा उन्हें समाज की मुख्य धारा में लाया जा सकता है। यहीं पर विज्ञान संचार की भूमिका सामने आती है। जिस दिन देश का गरीब साधारण ब्याज और चक्रवृद्धि ब्याज के बीच के फर्क को समझ जाएगा, उस दिन देश में क्रांति आ जाएगी।

वैश्विक विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी से जुड़ी प्रगति के नजरिये से हमारे देश में भावी विज्ञान संचार का रोडमैप क्या होना चाहिए?

विज्ञान और गणित का शिक्षण विज्ञान संचार से अलग है लेकिन ये एक दूसरे के लिए उपयोगी होते हैं। हमारे देश में गणित शिक्षण पर केंद्रित एक विश्वविद्यालय बनाए जाने की आवश्यकता है जहाँ पर विज्ञान संचार के माध्य से गणित शिक्षण को सुगम और सरल बनाने पर जोर दिया जाना चाहिए।

आपसे बात करके बहुत अच्छा लगा। इस सार्थक संवाद के लिए आपको 'इलेक्ट्रानिकी आपके लिए' परिवार और मेरी ओर से हार्दिक धन्यवाद !

आपको और 'इलेक्ट्रानिकी आपके लिए' परिवार को भी मेरी ओर से धन्यवाद एवं शुभकामनाएं।

mmgore@vigyanprasar.gov.in

❑❑❑

ओरिगेमी

पेपर फोल्डिंग का अनोखा विज्ञान

वी.एस.एस.शास्त्री

1995 में जापान ने अपना मूनमिशन कगाया लांच किया था। उन्हें सोलर पैनल को अंतरिक्ष में भेजने के समय कुछ तकनीकी परेशानी आ रही थी। उन्होंने अपने देश के अखबारों और दूसरे संचार माध्यमों के जरिये इस समस्या के समाधान पर विचारों का आह्वान किया। जल्द ही एक भौतिक वैज्ञानिक प्रोफेसर कोर्योमियुरा ने एक डिजाइन सरकार को भेजा जिसे कुछ मामूली संशोधन के साथ अपना लिया गया। यह डिजाइन ओरिगेमी का डिजाइन था।

ओरिगेमी पेपर फोल्डिंग का एक विज्ञान है जिसका विकास जापान में हुआ था। ओरिगेमी शब्दमें 'ओरी' का अर्थ है फोल्डिंग और 'गेमी' का अर्थ है कागज। इस कलात्मक विज्ञान में कागज पर कट, ग्लू और मार्किंग नहीं की जाती है। जापानी अपनी सभी परंपराओं और क्रियाकलापों के दौरान इस ओरिगेमी का उपयोग करते हैं। वे यदि किसी अपने को कोई उपहार भी देते हैं तो उस उपहार के साथ कागज का एक ओरिगेमी मॉडल भी जरुर देते हैं। उनकी परंपरा में कागज से बने सारस को शुभ संयोग का प्रतीक माना जाता है। जापान और चीन के बाद अमेरीका ने ओरिगेमी की दिशा में योगदान दिया। इस देश ने ओरिगेमी क्लब बनाये और फिर पूरी दुनिया में यह लोकप्रिय हो गया। 1956 में अकिरा योशिजावा नाम के एक ओरिगिमिस्ट ने पेपर फोल्डिंग के अनुक्रमों को दर्शाने वाले चिह्न और प्रतीकों का विकास किया। उसके बाद जल्द ही पूरी दुनिया ने इस चिह्न प्रणाली को अपना लिया। इस तरह पेपर फोल्डिंग की एक भाषा का उदय हुआ। दूसरी अध्ययन शाखाओं के लोग भी इस विशिष्ट पेपर फोल्डिंग विधा में रूचि लेने लगे और फिर कालांतर में इससे अनेक अनुप्रयोग तैयार हुए। 1995 में जापान ने अपना मूनमिशन कगाया लांच किया था। उन्हें सोलर पैनल को अंतरिक्ष में भेजने के समय कुछ तकनीकी परेशानी आ रही थी। उन्होंने अपने देश के अखबारों और दूसरे संचार माध्यमों के जरिये इस समस्या के समाधान पर विचारों का आह्वान किया। जल्द ही एक भौतिक वैज्ञानिक प्रोफेसर कोर्योमियुरा ने एक डिजाइन सरकार को भेजा जिसे कुछ मामूली संशोधन के साथ अपना लिया गया। यह डिजाइन ओरिगेमी का डिजाइन था। इस डिजाइन के बारे में वेबसाइट www.koryomiurafold.org के माध्यम से जाना जा सकता है।

भारत में भी इसका एक अतीत रहा है। 19वीं शताब्दी के अंतिम दशक में चेन्नई के राजपेत्ता में एक व्यक्ति तन्दानम सुंदर राव ने अपने पोते के लिए कोई उपहार खरीदने एक दिन बाजार गये। वे एक छोटी से किताब खरीद लाए जिसमें कागज के कुछ पन्ने एक जगह तह बना कर लगे हुए थे। उस किताब को देखकर पोते के मन में कोई दिलचस्पी नहीं जागी। वह उस किताब में दी गई जानकारी को समझने के लिए अपने पड़ोस के वृद्ध शिक्षक से मिला। पहले तो उन शिक्षक को भी उस किताब के भीतर दी गई सामग्री समझ न आई। फिर उन्होंने जब गंभीरता के साथ उसका अध्ययन किया तो उन्हें वह बेहद रुचिकर लगी। कागज को अनेक आकृतियों में मोड़कर उनसे चिड़िया, तितली और इन जैसे तमाम जीवों की आकृतियाँ बनाने की विधि उस किताब में समझाई गई थी। उन शिक्षक ने फिर

उस किताब में दी गई रोचक ज्यामिति को समझने के बाद उस विधा को और गहराई से अध्ययन किया। आगे चलकर उनके प्रयास और योगदान से कागज की फोल्डिंग और उसका गणित संचार अध्ययन की एक नई शाखा के रूप में उदित हुआ। उन्होंने 1895 में इस विषय पर एक महत्वपूर्ण पुस्तक 'जियोमेट्रिकल कंस्ट्रक्शन्स इन पेपर फोल्डिंग'। संयोगवश यह किताब जर्मनी तक जा पहुँची और उसका अनुवाद जर्मन भाषा में किया गया। आगे चलकर अमेरिकन मैथमेटिकल एसोसिएशन ने इसके के 47 संस्करण प्रकाशित किए। डोवर न्यूयार्क साल दर साल इसे प्रकाशित करता आ रहा है।

एमआईटी (अमेरीका) में एरिक डोमेन 26 वर्ष की आयु में ओरिगेमी के प्रोफेसर नियुक्त किये गये थे। उनकी पी-एच.डी. का विषय पेपर फोल्डिंग समस्या था। ओरिगेमी के इतिहास पर केंद्रित प्रमाणिक पुस्तकों और इंटरनेट पर उनके विषय में और अधिक जानकारी हासिल की जा सकती है। राबर्टजे. लेंग (4 मई1961) जेट प्रोपल्शन लेबोरेट्री में एक भौतिक वैज्ञानिक हैं। उनका शौक भी ओरिगेमी है। वह इस नवोन्मेषी विधा में इस कदर रम गये कि उन्होंने एक साफ्टवेयर 'माइंडट्री' बना डाला। एक बार ओरिगेमी वाले कागज की आकृतियां बन जाने के बाद यह सॉफ्टवेयर पेपर फोल्डिंग सिक्वेंस को आटोमेटिक तरीके से प्रिंट कर लेता है। आजकल लेंग एक किलोमीटर लंबाई वाले धातु का एक बारीक पत्तर बनाने में जुटे हुए हैं जोकि अंतरिक्ष में एक अवतल दर्पण के समान खुलेगा। वैज्ञानिक इस बात की उम्मीद करते हैं कि ओरिगेमी के इस कमाल से मौजूदा हब्बल टेलीस्कोप को रिप्लेस किया जाना संभव है। हमें ज्ञात है कि किसी भी चौडाई वाले कागज को हम केवल आठ बार फोल्ड कर सकते हैं। गणना यह दर्शाते हैं कि जब किसी कागज को आठ बार से अधिक फोल्ड किया जाता है तो इसकी मोटाई चर घातांक की अनुपात में बढ़ जाती है। हाईस्कूल की एक विद्यार्थी ब्रिटानी गुलिवन ने दुनिया को आश्चर्य में तब्दील दिया जब उसने एक टीवी शो पर एक कागज के 12 फोल्ड किए। उसने निश्चित लंबाई और चौड़ाई के पेपर की फोल्डिंग के संबंध में एक नये वैज्ञानिक सूत्र को खोज निकाला है।

आज ओरिगेमी के माध्यम से मानव कल्याण के अनेक मार्ग खुलते हुए दिखाई दे रहे हैं। स्वास्थ्य के क्षेत्र में भी ओरिगेमी का उपयोग किया जाने लगा है। हृदय स्टेंट में ओरिगेमी तकनीक प्रयोग की जा रही है। भारत में इस अनोखी पेपर फोल्डिंग तकनीक का उपयोग विज्ञान संचार को चरितार्थ करने में किया जा रहा है। इस विधा से बच्चों और युवाओं को एकाकार कर एक सुनहरे भविष्य का निर्माण संभव है।

❑❑❑

एक बार ओरिगेमी वाले कागज की आकृतियाँ बन जाने के बाद यह सॉफ्टवेयर पेपर फोल्डिंग सिक्वेंस को आटोमेटिक तरीके से प्रिंट कर लेता है। आज कल लेंग एक किलोमीटर लंबाई वाले धातु का एक बारीक पत्तर बनाने में जुटे हुए हैं जोकि अंतरिक्ष में एक अवतल दर्पण के समान खुलेगा। वैज्ञानिक इस बात की उम्मीद करते हैं कि ओरिगेमी के इस कमाल से मौजूदा हब्बल टेलीस्कोप को रिप्लेस किया जाना संभव है।

'ऊतक संवर्धन'
लेखक : प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव
प्रकाशक : आईसेक्ट विश्वविद्यालय
मूल्य : 200 रुपये

ऊतक संवर्धन तकनीक के बढ़ते प्रयोग एवं महत्व को ध्यान में रखते हुए पुस्तक रची गई है। हिंदी में ऊतक संवर्धन संबंधी साहित्य के अभाव को दूर करने का प्रयास प्रस्तुत प्रति के माध्यम से किया गया है।

कोशिकाओं के ऐसे समूह जो संरचना और कार्य में एक जैसे होते हैं, उन्हें ऊतक या टिश्यू कहते हैं। जैव-विविधता के संरक्षण की दिशा में ऊतक संवर्धन तकनीक द्वारा विलुप्तप्रायः वनस्पतियों एवं जीवों की विभिन्न प्रजातियों का विकास किया जा रहा है।

10 जुलाई 1939, बांसी जिला सिद्धार्थ नगर, उत्तरप्रदेश में जन्मे इस किताब के लेखक प्रेमचंद्र श्रीवास्तव ने एम. एस-सी. (वनस्पति शास्त्र) उत्तीर्ण करने के बाद पादप विषाणु एवं मृदा कवक पर शोध कार्य किया। अब तक लगभग 550 लेख विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए। विज्ञान पर अंटार्टिका, भारतीय सभ्यता के साक्षी, पेड़-पौधों का रोचक संसार, जीव प्रौद्योगिकी के बढ़ते कदम, वनस्पति विज्ञानी डॉ. जगदीशचंद्र बोस आदि पुस्तकें प्रकाशित, चर्चित और पुरस्कृत हुई। आपने कई पत्रिकाओं का संपादन भी किया। विज्ञान की गतिविधियों में आपका सक्रिय योगदान रहा।

न्यूट्रिनो आब्जर्वेटरी

डॉ.कपूरमल जैन

आज भौतिकी बहुत बदल कर विस्तार ले चुकी है। आज यह न्यूटन के नियमों और आईंस्टीन के सापेक्षता के सिद्धांत से निकल कर बहुत आगे आ चुकी है। भौतिकी में अब कई मोर्चों पर वैश्विक सहयोग से प्रायोगिक और सैद्धांतिक स्तरों पर काम चल रहे हैं। ब्रह्माण्ड के रहस्यमय ब्लेक होल और न्यूट्रॉन तारे शोध के नये क्षेत्र उपलब्ध करा रहे हैं। यह विद्युतचुम्बकीय तरंगों, न्यूट्रिनो तथा गुरूत्वीय तरंगों के रूप में मिले संकेतों के विश्लेषण के कारण संभव हुआ।

सन् 1987 में 'न्यूट्रिनो एस्ट्रोनॉमी' को जोरदार पुश मिला। इस वर्ष 'सुपरनोवा 1987ए' की घटना को 'कामियाकाण्डे न्यूट्रिनो आब्जर्वेटरी' में रिकार्ड किया गया। 'सुपरनोवा' की घटना तब घटती है, जब बड़े तारों की मृत्यु होती है। यह अत्यधिक घनी और ऊर्जा उत्पादक घटना है, जिस दौरान विद्युत चुम्बकीय ऊर्जा (फोटॉन) के साथ 'न्यूट्रिनो' भी उत्सर्जित होते हैं। 'फोटॉन' पदार्थ के साथ बहुत तीव्र अंतःक्रिया करती है, जबकि 'न्यूट्रिनो' अत्यंत नगण्य। इस कारण 'फोटॉन' को अपने 'उद्गम केंद्र' से बाहर आने में बहुत समय लगता है जबकि 'न्यूट्रिनो' शीघ्र ही निकल पाने में समर्थ होता है। एक गणना के अनुसार 'सूर्य' के केंद्र से जहाँ 'फोटॉन' को 'पृथ्वी' तक पहुँचने में जहाँ लगभग 40 हजार वर्ष लगते हैं, वहीं 'न्यूट्रिनो' को बाहर आने में मात्र कुछ मिनट ही। इस तरह 'न्यूट्रिनो' के माध्यम से इस तरह की घटनाओं की जानकारी बहुत पहले मिल जाती है।वैज्ञानिकों को आशा है कि 'सुपरनोवा विस्फोट' के बाद 'तारे' के बचे हुए हिस्से, 'गामा रे बर्स्टर' तथा 'सक्रिय निहारिकाओं' के केन्द्र में स्थित घने-पिण्ड या 'ब्लेक होल' के बारे में जानकारियों को प्राप्त करने में 'न्यूट्रिनो' अत्यंत सहायक हो सकते हैं।तारों की सतह से प्राप्त होने वाले उच्च-ऊर्जा के 'फोटॉनों' की वास्तविक उत्पत्ति को जानने के लिये भी 'न्यूट्रिनो' मददगार साबित हो सकते हैं। इस तरह अब ब्रह्माण्ड के रहस्यों को समझने में विद्युत चुम्बकीय तरंगें ही नहीं, बल्कि 'न्यूट्रिनो' भी अपनी अहम् भूमिका निभाने लगा है। इस अहसास के बाद वैज्ञानिकों ने पारंपरिक 'प्रकाशीय वेधशालाओं' की ही तरह विश्व में 'कामिओकाण्डे न्यूट्रिनो आब्जर्वेटरी', 'सुपर कामिओकाण्डे न्यूट्रिनो आब्जर्वेटरी', 'सडबरी न्यूट्रिनो आब्जर्वेटरी', 'न्यूट्रिनो आइसक्यूब आब्जर्वेटरी' आदि जैसी कई 'न्यूट्रिनो आब्जर्वेटरी(वेधशालाएं)' स्थापित की हैं तथा कई अभी निर्माणावस्था में हैं। जिस तरह प्रकाशीय टेलीस्कोप विभिन्न प्रकार की विद्युत चुम्बकीय तरंगों की सहायता से आकाश को स्कैन करते हैं, उसी तरह न्यूट्रिनो वेधशालाओं में स्थापित संसूचक न्यूट्रिनो की सहायता से यही काम करेंगे। भारत में भी एक 'न्यूट्रिनो वेध शाला' स्थापित हो रही है। इसका नाम इंडिया-बेस्ड न्यूट्रिनो आब्जर्वेटरी (आइ. एन.ओ.) है।

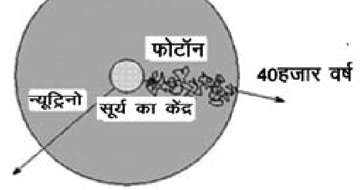

सूर्य के केंद्र से फोटॉन तथा न्यूट्रिनो का पृथ्वी तक पहुँचना।

इंडिया-बेस्ड न्यूट्रिनो आब्जर्वेटरी(आइ.एन.ओ.)

भारत में स्थापित होने जा रही 'न्यूट्रिनो आब्जर्वेटरी' का मुख्य उद्देश्य 'वायुमंडलीय न्यूट्रिनो' के अध्ययन के साथ ही इसके दोलन करने के रूझान का पता लगाना है। 'वायुमंडलीय न्यूट्रिनो' प्राथमिक कॉस्मिक किरणों के हवा के अणुओं के साथ अंतःक्रिया के दौरान पैदा होते हैं। इन कॉस्मिक किरणों में मुख्यतः अत्यधिक ऊर्जावान 'प्रोटॉन' होते हैं, जो 'हवा के अणुओं' से टकराकर 'पायॉन' नामक कणों को पैदा करते हैं। लेकिन, ये 'पायॉन' अत्यंत ही 'अल्प-जीवी' होते हैं जो शीघ्र ही क्षय हो कर 'म्यूऑन' और 'एंटी-म्यूऑन-न्यूट्रिनो' को जन्म देते हैं। म्यूऑन भी अल्पजीवी होते हैं, जो कुछ क्षणों में क्षय हो कर म्यूऑन-न्यूट्रिनो, इलेक्ट्रॉन और इलेक्ट्रॉन-एंटी-न्यूट्रिनो नामक तीन कणों को जन्म देते हैं। इस तरह पृथ्वी के वायुमंडल में हमें दो प्रकार के न्यूट्रिनो मिलते हैं। इन्हें संसूचित करने में कई दिक्कतें सामने आती हैं क्योंकि वायुमंडल में कॉस्मिक किरणों तथा प्राकृतिक रेडियोधर्मिता के कारण उपस्थिति रेडियोधर्मी विकिरणों के कारण कई अन्य प्रकार के आवेशित कण भी मौजूद होते हैं। इनसे पैदा होने वाले सशक्त सिग्नल 'न्यूट्रिनो' के संसूचन में बाधा बनते हैं। इनसे मापन के दौरान जो पृष्ठभूमि रव (noise) पैदा होता है, उसके चलते 'न्यूट्रिनो' के सिग्नल का संज्ञान होना कठिन होता है। अतः पृष्ठभूमि में उपस्थित इन सशक्त सिग्नलों को 'संसूचक' तक पहुँचने से रोके बिना काम नहीं चल सकता है। इसे ध्यान में रखते हुए वैज्ञानिकों ने बड़े विचारपूर्वक इस वेधशाला को स्थापित करने की 'साइट' का चयन किया।

आइ.एन.ओ. के लिए 'साइट' का चयन

आइ.एन.ओ. को स्थापित करने के लिए वैज्ञानिकों ने 'भूगर्भीय' तथा 'भूकम्पीय' कारकों पर विचार करने के उपरांत तमिलनाडु में घनी चट्टानों वाले पहाड़ी क्षेत्र का चयन किया। फिर पृष्ठभूमि में उपस्थित विकिरणों के प्रभाव को समाप्त करने के लिए इसे धरती-सतह के बहुत नीचे गहराई में स्थापित करने की योजना बनाई ताकि वेधशाला को करीब 1300 मीटर का रॉक-कवर मिल जाए। इसके बाद वैज्ञानिकों ने न्यूट्रिनो के संसूचन हेतु संसूचक की 'डिजाइन' पर विचार किया।

'आइ.एन.ओ.' से आशा-अपेक्षाएँ

'आइ.एन.ओ.' को इस तरह से 'डिजाइन' किया जा रहा है कि इससे जो 'डाटा' प्राप्त हों, वे 'न्यूट्रिनो' से जुड़े विविध प्रश्नों के उत्तर देने में सहायक हो सके। वर्तमान में वैज्ञानिकों को 'न्यूट्रिनो' से जुड़ी कई जानकारियाँ हैं तथा उनसे उठने वाले कई अनसुलझे सवाल भी हैं। इन सवालों के उत्तर के साथ ही इस वेधशाला में किये जाने वाले शोध से वैज्ञानिकों को कई आशाएं भी हैं, उदाहरणार्थ –

- पदार्थ के 'स्टेण्डर्ड मॉडल' (क्वार्क-लेप्टॉन मॉडल) में 'न्यूट्रिनो' 'लेप्टॉन परिवार' के सदस्य हैं। ये तीन 'फ्लेवर' में पाये जाते हैं। 'फ्लेवर' का संबंध इनकी 'द्रव्यमान अवस्था' से है। इनमें से एक 'इलेक्ट्रॉन' के साथ संबंधित है तथा अन्य दो इलेक्ट्रॉन के भारी कजिन 'म्यूऑन' तथा 'टाओऑन' से संबंध रखते हैं। जब 'न्यूट्रिनो' यात्रा करते हैं तो अपने 'फ्लेवर' बदलते हुए यानि एक प्रकार के 'न्यूट्रिनो' से अन्य प्रकार के 'न्यूट्रिनो' में बदलते हुए चलते हैं। इसे तकनीकी भाषा में 'न्यूट्रिनो दौलन' कहते हैं। सूर्य के केंद्र में 'सोलर न्यूट्रिनो' के रूप में सिर्फ 'इलेक्ट्रॉन न्यूट्रिनो' ही पैदा होते हैं, लेकिन धरती पर 'सोलर न्यूट्रिनो' को तीनों ही प्रकार के 'न्यूट्रिनो' को संसूचित किया गया। इस तरह 'न्यूट्रिनो दौलन' की प्रायोगिक पुष्टि हो गई। इस खोज से 'न्यूट्रिनो' में 'द्रव्यमान' होना प्रमाणित कर दिया। इन प्रयोगों से वैज्ञानिकों को इनके 'सापेक्षीय द्रव्यमान' तो मालूम

पदार्थ के 'स्टेण्डर्ड मॉडल' (क्वार्क-लेप्टॉन मॉडल) में 'न्यूट्रिनो' 'लेप्टॉन परिवार' के सदस्य हैं। ये तीन 'फ्लेवर' में पाये जाते हैं। 'फ्लेवर' का संबंध इनकी 'द्रव्यमान अवस्था' से है। इनमें से एक 'इलेक्ट्रॉन' के साथ संबंधित है तथा अन्य दो इलेक्ट्रॉन के भारी कजिन 'म्यूऑन' तथा 'टाओऑन' से संबंध रखते हैं। जब 'न्यूट्रिनो' यात्रा करते हैं तो अपने 'फ्लेवर' बदलते हुए यानि एक प्रकार के 'न्यूट्रिनो' से अन्य प्रकार के 'न्यूट्रिनो' में बदलते हुए चलते हैं। इसे तकनीकी भाषा में 'न्यूट्रिनो दौलन' कहते हैं।

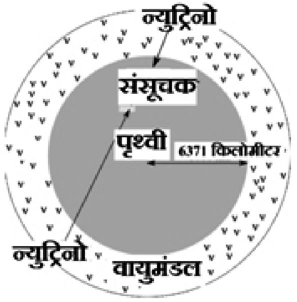

संसूचक में ऊपर तथा नीचे से प्रवेश करने वाले न्यूट्रिनो में पैदा होने वाले पदार्थ प्रभाव का अध्ययन।

हो गये, लेकिन इनके 'वास्तविक द्रव्यमान' की अभी कोई जानकारी नहीं है।

- यात्रा के दौरान 'न्यूट्रिनो' के फ्लेवर से संबंधित 'मिक्सिंग पैरामीटर' की गणना करना भौतिकी की महत्त्वपूर्ण समस्याओं में से एक है। इस वेधशाला में इसके समाधान की आशा है। हम जानते हैं कि 'वायुमंडलीय न्यूट्रिनो' में 'म्यू-न्यूट्रिनो' तथा 'इलेक्ट्रॉन-न्यूट्रिनो' 2:1 के अनुपात में होते हैं। चूँकि इनके एक 'फ्लेवर' से दूसरे 'फ्लेवर' में 'दोलन' की प्रायिकता उनकी ऊर्जा तथा उस दूरी पर निर्भर करती है जिसे 'संसूचक' में प्रवेश करने के पहले तय करते हैं, अतः 'संसूचक' में ऊपर तथा नीचे से प्रवेश करने वाले 'न्यूट्रिनो' के तुलनात्मक अध्ययन से 'मिक्सिंग पैरामीटर' में बारे में बहुत जानकारी मिलने की संभावना है।

- न्यूट्रिनो के कई गुणों का पता लग चुका है, लेकिन अभी भी अनुप्रयोगों की दृष्टि से इसके अन्य विविध गुणों का पता लगाना जरूरी है, जो भौतिकी, जीवविज्ञान, भूगर्भशास्त्र, हाइड्रोलॉजी आदि के अध्ययन में उपयोगी हो सकें।

- वैज्ञानिक इस वेधशाला में न्यूट्रिनो पर 'पदार्थ प्रभाव' (Matter effect) का अध्ययन कर सकेंगे। इस प्रभाव को मिखेयेव-स्मिरनोव-वोल्फेंस्टीन प्रभाव (MSW effect) के नाम से भी जाना जाता है। यह 'कण-भौतिकी' में उल्लेखित वह प्रक्रिया है, जो पदार्थ की उपस्थिति में 'न्यूट्रिनो-दोलन' को प्रभावित करती है। इस प्रभाव का आधार यह संकल्पना है कि पदार्थ की उपस्थिति में 'न्यूट्रिनो' का 'प्रभावी द्रव्यमान' निर्वात की तुलना में अलग रहता है। अतः 'न्यूट्रिनो दोलनों' को भी अलग रहना चाहिये।

- 'सर्न'(European Organization for Nuclear Research) या 'फर्मी लैब' (Fermi Laboratory) में प्रयोगों के दौरान उत्पन्न होने वाले 'न्यूट्रिनो' इस वेधशाला से गुजरेंगे। अतः वैज्ञानिकों को इनके अध्ययन की भी आशा है।

- इस वेधशाला में वैज्ञानिक उन घटनाओं का भी अध्ययन कर सकेंगे, जिनका संबंध हमारे ब्रह्माण्ड के वर्तमान स्वरूप से है।

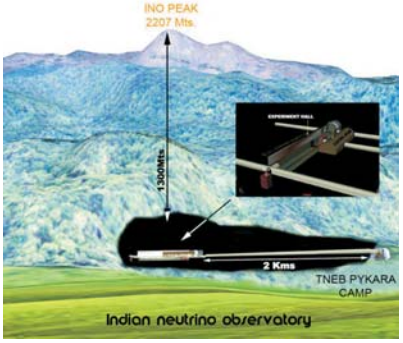

'भूगर्भीय' तथा 'भूकम्पीय' कारकों पर विचार करने के उपरांत तमिलनाडु में घनी चट्टानों वाले पहाड़ी क्षेत्र में आइ.एन.ओ. स्थापित करने के लिए चयनित साइट

न्यूट्रिनो के कई गुणों का पता लग चुका है, लेकिन अभी भी अनुप्रयोगों की दृष्टि से इसके अन्य विविध गुणों का पता लगाना जरूरी है, जो भौतिकी, जीवविज्ञान, भूगर्भशास्त्र, हाइड्रोलॉजी आदि के अध्ययन में उपयोगी हो सकें।

संसूचक की डिज़ाइन

'आइ.एन.ओ.' में प्रयुक्त होने वाले 'संसूचक' की डिज़ाइन बहुत महत्त्वपूर्ण है। इसमें एक ऐसा अतिसंवेदी उपकरण लगाया जा रहा है, जिससे अत्यंत मुश्किल से पकड़ में आने वाले 'न्यूट्रिनो' का आसानी से पता लगाया जा सके। इसमें विशेष प्रकार से 'डिज़ाइन' किये गये 'विद्युत चुम्बकीय केलोरीमीटर' को प्रयुक्त किया जा रहा है, ताकि उन कण की ऊर्जा को मापा जा सके जो 'नाभिकीय बल' के माध्यम से यदाकदा अंतःक्रिया करते हैं। इसमें 'लोहे' (^{56}Fe) के नाभिक का चयन किया जा रहा है, ताकि 'न्यूट्रिनो' (ν) से अभिक्रिया कर यह 'कोबाल्ट' (^{56}Co) में बदल सके और एक 'इलेक्ट्रॉन' (e^-) को जन्म दे सके। इस अभिक्रिया $^{56}Fe(\nu_e,e^-)^{56}Co$ को रिकार्ड करने की व्यवस्था संसूचक में की जा रही है।

इसमें 'संसूचक' के रूप में 50000 टन मेग्नेटाइज्ड लोहे की मोटी परतें रखी जा रही हैं, जिनके बीच के खाली स्थानों में 'न्यूट्रिनो संसूचकों' के रूप में करीब 30 हजार 'ग्लास रेजिस्टिव प्लेट चैम्बर्स'(आर.पी.सी.) लगाए जा रहे हैं। 'संसूचक' में चुम्बकीय क्षेत्र तैयार करने के लिए 'धारावाही कुंडलियों' का प्रयोग किया जा रहा है, जिससे पूरा 'संसूचक' चुम्बकीय हो जाएगा। चुम्बकीय क्षेत्र 'न्यूट्रिनो' और 'लोहे के नाभिक' में अंतः क्रिया से उत्पन्न 'आवेशित कण' के मार्ग को वक्र बनाता है। इसकी 'वक्रता' से 'न्यूट्रिनो' की ऊर्जा को मापा जाना है। यह बहुत भारी 'संसूचक' है जिसमें विश्व का अब तक का सबसे बड़ा 'विद्युत चुम्बक' लगाया जा रहा है, जो 'सर्न' के वर्तमान में प्रयुक्त 'विद्युत चुम्बक' की तुलना में करीब चार गुना बड़ा है। आगे चल कर इसे और शक्तिशाली विद्युत चुम्बक से बदला जाना है। इसके निर्माण हेतु अन्य इरिडियम, लीथियम और पोटेशियम हाइड्रोआक्साइड आदि जैसे कई और भी तत्वों के इस्तेमाल पर विचार तथा शोध किया जा रहा है।

इस वेधशाला में मेग्नेटाइज्ड आयरन केलोरीमीटर 'आईसीएएल' (Magnetised Iron CALorimeter),'न्यूट्रिनो' के लिए 'टारगेट' का तथा इसके साथ प्रयुक्त 'आर.पी.सी' ('रेसिस्टिव प्लेट चैम्बर्स') 'एक्टिव डिटेक्टिव एलीमेंट' का कार्य करेंगे। इसमें 'इलेक्ट्रॉनिक सिग्नल' को कम्प्यूटर ले जाने के लिए 36 लाख अधिक 'चेनल' लगाई जा रही हैं, ताकि उन्हें 'स्टोर' किया जा सके।

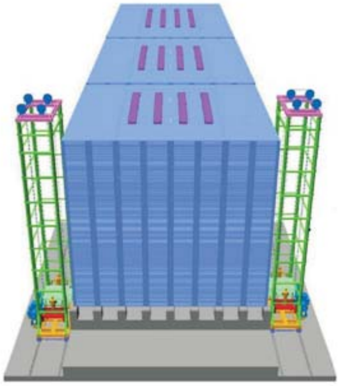

'आइ.एन.ओ.' में प्रयुक्त किया जाने वाला संसूचक 'आइसीएएल'

आइ.एन.ओ. के स्थापित होने से हमारे देश में शोध सुविधाओं में अकल्पनीय विस्तार होने जा रहा है। आशा है कि यह वेधशाला सन् 2022 तक कार्य करना आरंभ कर देगी। इस वेधशाला में 'भूमिगत प्रयोगशाला' की स्थापना के साथ ही इस प्रोजेक्ट के अंतर्गत तमिलनाडु के थेली जिले की बोडी पश्चिम पहाड़ियों में स्थित पोट्टीपुरम में भू-तल पर भी सुविधाएं खड़ी की जा रही हैं।

इस 'संसूचक' में ऊपर से प्रवेश करने वाले 'न्यूट्रिनो' की तुलना में नीचे से प्रवेश करने वाले 'न्यूट्रिनो' के द्वारा तय की जाने वाली दूरी बहुत अधिक होगी, क्योंकि इन्हें पूरी धरती को पार करके संसूचक तक पहुँचना पड़ेगा। इस तरह वैज्ञानिकों को आशा है कि इस 'संसूचक' से 'दौलन प्रायिकता' को सीधे मापा जा सकेगा।

वैज्ञानिकों को आशा है कि मेग्नेटाइज्ड आयरन केलोरीमीटर में वायुमंडल में उपस्थित 'एंटी-न्यूट्रिनो' और 'म्यूऑन' को पहचानने की क्षमता होने से इस वेधशाला में कई प्रमुख लक्ष्यों को आसानी से प्राप्त किया जा सकेगा।

संसूचक की स्थापना

भूतल के नीचे 132मी.X26 मी.X20मी आकार की बड़ी गुफा में 'संसूचक' को इस वेधशाला की प्रयोगशाला में स्थापित किया जा रहा है। इसमें कई और छोटी-छोटी गुफाएं भी निर्मित की जा रही हैं। भूतल से इस प्रयोगशाला तक पहुँचने के लिए करीब 2100 मी लम्बी तथा 7.5 मी चौड़ी नहर भी बनाई जा रही है।

आइ.एन.ओ. प्रोजेक्ट में शामिल हैं कई संस्थाएं

यह एक 'मल्टी-इंस्टीट्यूशनल' प्रोजेक्ट है जिसमें देश की देश की 24 संस्थाएं एवं विश्वविद्यालय मिल कर काम कर रही है। इनके नाम फिजीकल रिसर्च लेबोरेटरी अहमदाबाद, अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी अलीगढ़, हरीशचंद्र रिसर्च इंस्टीट्यूट इलाहाबाद, इंस्टीट्यूट ऑफ फिजिक्स भुवनेश्वर, उत्कल यूनिवर्सिटी भुवनेश्वर, यूनिवर्सिटी ऑफ कालीकट, पंजाब यूनिवर्सिटी चंडीगढ़, आई.आई.टी. मद्रास, दी इंस्टीट्यूट ऑफ मैनेजमेंट चैन्नई, दिल्ली यूनिवर्सिटी दिल्ली, जवाहरलाल यूनिवर्सिटी दिल्ली, इंदिरागांधी सेंटर फॉर एटॉमिक रिसर्च कलपक्कम, साहा इंस्टीट्यूट ऑफ न्यूक्लियर फिजिक्स कोलकाता, यूनिवर्सिटी ऑफ कलकत्ता, वेरिएबल इनर्जी सायक्लोट्रॉन सेंटर कोलकाता, लखनऊ यूनिवर्सिटी लखदऊ, अमेरिकन कॉलेज मदुराई, भाभा एटॉमिक रिसर्च सेंटर मुम्बई, सी.एम.इ.एम.एस. मुम्बई, आई.आई.टी. बॉम्बे, मुम्बई यूनिवर्सिटी, यूनिवर्सिटी ऑफ मैसोर, यूनिवर्सिटी ऑफ काश्मीर श्रीनगर, बनारस हिंदु यूनिवर्सिटी, टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ फंडामेंटल रिसर्च, मुम्बई हैं।

टाटा इंस्टीट्यूट को संसूचक के लिए प्रयुक्त होने वाले 'आर.पी.सी.' (रेसिस्टिव प्लेट चैम्बर्स) पर शोध तथा फेब्रिकेट करने के साथ ही संबंधित 'इलेक्ट्रॉनिक्स' को विकसित करने तथा बी.ए.आर.सी, ट्रांबे तथा वेरिएबल इनर्जी सायक्लोट्रॉन सेंटर (वीईसीसी) कोलकाता को 'विद्युत चुम्बक' को विकसित करने की अहम जिम्मेदारियाँ दी गई हैं।

हमारे देश में युवा वैज्ञानिकों के लिए अपार अवसर

आइ.एन.ओ. के स्थापित होने से हमारे देश में शोध सुविधाओं में अकल्पनीय विस्तार होने जा रहा है। आशा है कि यह वेधशाला सन् 2022 तक कार्य करना आरंभ कर देगी। इस वेधशाला में 'भूमिगत प्रयोगशाला' की स्थापना के साथ ही इस प्रोजेक्ट के अंतर्गत तमिलनाडु के थेली जिले की बोडी पश्चिम पहाड़ियों में स्थित पोट्टीपुरम में भू-तल पर भी सुविधाएं खड़ी की जा रही हैं। इस परियोजना के अंतर्गत मदुराई में 'नेशनल सेंटर फार हाई एनर्जी फिजिक्स' की स्थापना भी की जा रही है ताकि भूतल के नीचे स्थापित की जा रही प्रयोगशाला का रख-रखाव, मानव संसाधन विकास तथा संसूचक से संबंधित अनुसंधान, विकास और अनुप्रयोगों से संबंधित कार्यों को किया जा सके। हाल ही में इस परियोजना के अंतर्गत एच.बी.एन.आइ. (Homi Bhabha National Institute) में एक ग्रेजुएट ट्रेनिंग स्कूल आरंभ किया है, जहाँ न्यूट्रिनो-अनुसंधान से जुड़े विभिन्न क्षेत्रों में प्रशिक्षण दिया जा रहा है। इसमें प्रवेश लेने वाले विद्यार्थी आगे चल कर पीएच.डी कर सकेंगे। इस वेधशाला में स्थापित यह 'भूमिगत प्रयोगशाला' 'उच्च-ऊर्जा भौतिकी' तथा 'नाभिकीय भौतिकी' के क्षेत्र में अनुसंधान के लिए एक ऐसी प्रयोगशाला है, जिसमें कोई त्वरक (एक्सलरेटर) नहीं है। इसतरह यह नॉन-एक्सलरेटर प्रयोगशाला है। इस प्रयोगशाला के स्थापित होने तथा अंतर-राष्ट्रीय सहयोग में वृद्धि होने से हमारे देश के विज्ञान-प्रेमी युवाओं के लिए अपार अवसर उपलब्ध होने जा रहे हैं।

kapurmaljain@gmail.com

❑❑❑

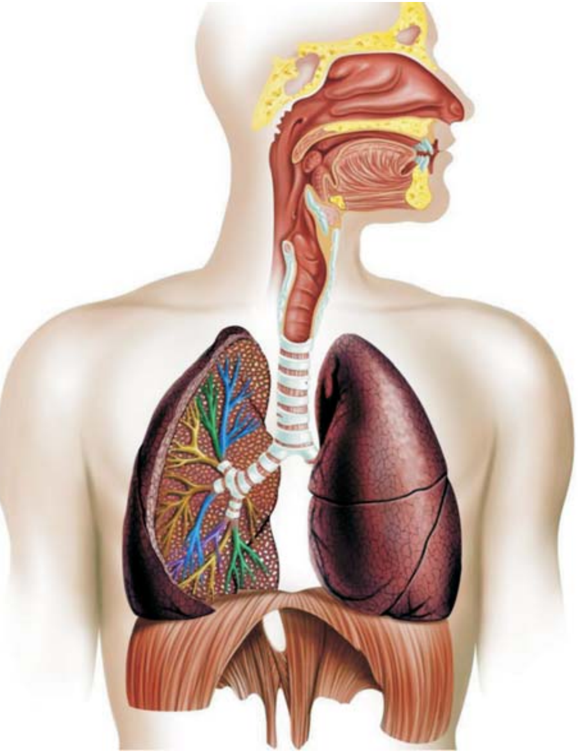

साँस
क्यों और कैसे लेते हैं?

सुभाष चंद्र लखेड़ा

हम साँस क्यों लेते हैं? क्या आप जानते हैं कि छोटे से दिखने वाले इस प्रश्न का उत्तर खोजने में वैज्ञानिकों दो हजार से अधिक वर्षों का समय लगा। दरअसल, मनुष्य साँस क्यों लेता है, इस प्रश्न का उत्तर देने का प्रयत्न सर्वप्रथम प्रसिद्ध दार्शनिक हिपोक्रेटीज़ ने किया था। उनका जन्म चार सौ साठ वर्ष ईसा पूर्व हुआ था। उनका कहना था कि हम साँस अपने दिल को ठंडा करने के लिए लेते हैं। एक लंबे समय तक यही माना जाता रहा। उनके बाद गैलेन नामक विचारक ने इस प्रश्न पर पुनः अपना मत प्रकट किया। उनका जन्म एक सौ तीस वर्ष ईसा पूर्व हुआ था। उनका कहना था कि मनुष्य के जीवित रहने के लिए ताजी हवा जरूरी है और यह ताजी हवा ही दिल के बाएं हिस्से के खून से मिलकर जीवनदायक तत्त्व का निर्माण करती है। गैलेन के बाद लगभग बारह सौ वर्षों तक इस संबंध में किसी ने कोई नई जानकारी हासिल करने की कोशिश नहीं की। ईस्वी सन् 1200 के बाद वैज्ञानिकों का ध्यान एक बार फिर इस सवाल पर गया। उस समय कुछ विचारकों ने बताया कि जब हवा हमारे फेफड़ों में पहुँचती है तो उसके कुछ हिस्से को खून सोख लेता है। किंतु खून हमारे फेफड़ों में कहाँ से आता है और हवा के कुछ हिस्से को सोखने के बाद कहाँ जाता है, इन सवालों का जवाब उनके पास भी नहीं था। आखिरकार, सन् 1250 से सन् 1550 के समयकाल के दौरान इब्ब-अल नफीस और माइकल सर्वेटस नाम के दो वैज्ञानिकों ने इन सवालों का जवाब देने की कोशिश की। इब्ब-अल नफीस का जन्म सीरिया की राजधानी दमिश्क में सन् 1213 में हुआ था। वे अपने समय के प्रतिष्ठित चिकित्सकों में से थे। माइकल सर्वेटस एक स्पेनी चिकित्सक थे और उनका जन्म सन् 1509 में हुआ था। इन दोनों चिकित्सकों ने बताया कि 'खून फुप्फुस (पल्मोनरी) धमनी से होकर फेफड़ों में आता है और फेफड़ों में पहुँचने वाली हवा के कुछ भाग को सोखने के बाद वह फुप्फुस शिरा के द्वारा दिल के बाएं भाग में पहुँचता है।' फिर जन्म हुआ-महान वैज्ञानिक रॉबर्ट बॉयल का। पच्चीस जनवरी सन् 1627 के दिन आयरलैंड में जन्मे इस प्रतिभावान वैज्ञानिक ने अनेक प्रयोग किए। आधुनिक रसायन विज्ञान की नींव रखने वाले बॉयल ने हवा संबंधी अनेक प्रयोग किए। उन्होंने छोटे-छोटे जीव-जंतुओं को जब हवा से रिक्त कोठरियों में रखा तो ऐसे सभी जीव-जंतु मर गए। वे अपने इन प्रयोगों के आधार पर इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि हवा में ऐसी कोई गैस है जिसके बिना कोई भी प्राणी जीवित नहीं रह पाता है। उन्होंने और उनके समकालीन ब्रिटिश वैज्ञानिक जॉन मेयाऊ (John Mayow) ने यह भी बताया कि हवा का जो भाग जीवन के लिए जरूरी है, वही भाग दहन यानी ज्वलन के लिए भी जरूरी है। उल्लेखनीय है कि जॉन मेयाऊ का जन्म 24 मई 1640 में हुआ था। वे एक रसायनज्ञ, चिकित्सक और शरीरक्रिया विज्ञानी थे। अठारहवीं शताब्दी में जोसेफ प्रीस्टले, कार्ल शीले और जोसेफ ब्लैक की खोजों ने इस सवाल के जवाब को सफलता की मंजिल

तक पहुँचा दिया। प्रीस्टले और शीले ने हवा में मौजूद ऑक्सीजन गैस और ब्लैक ने कार्बन डाइऑक्साइड गैस की खोज की। इसके तुरंत बाद एन्तोइन लारेंट लैवोजिए (Antoine & Laurent Lavoisier) नामक वैज्ञानिक ने अपने प्रयोगों द्वारा यह सिद्ध कर दिया कि हवा का वह भाग जिसको फेफड़ों में खून सोखता है तथा जो 'श्वसन और दहन' दोनों के लिए बेहद जरूरी है, हवा में मौजूद ऑक्सीजन गैस है। उन्होंने यह भी बताया कि 'श्वसन और दहन' दोनों में ऑक्सीजन गैस खर्च होती है और कार्बन डाइऑक्साइड गैस बनती है। उल्लेखनीय है कि लैवोजिए का जन्म 26 अगस्त सन 1743 के दिन फ्रांस की राजधानी पेरिस में हुआ था। उपरोक्त खोजों के बाद वैज्ञानिकों ने श्वसन संबंधी अनेक नए तथ्यों का पता लगाया। बर्लिन के एक यहूदी परिवार में 2 मई सन् 1802 में जन्मे वैज्ञानिक हाइनरिच गुस्तव मैगनस (Heinrich Gustav Magnus) ने मनुष्यों की धमनियों और शिराओं में बहने वाले खून में ऑक्सीजन और कार्बन डाइऑक्साइड गैस की मात्राओं को मापा तो 19 अगस्त सन् 1830 में जर्मनी में जन्मे चिकित्सक–वैज्ञानिक लूथर मायर ने सर्वप्रथम यह ज्ञात किया कि खून का 'ऑक्सीजनीकरण' वायुमंडलीय दबाव पर निर्भर करता है। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में 17 अक्टूबर 1833 में जन्मे फ्रांस के शरीर क्रिया वैज्ञानिक पौल बेर्ट ने बताया कि जब मनुष्य को जरूरत के मुताबिक ऑक्सीजन नहीं मिल पाती है तो वह हांफने लगता है। बहरहाल, जहाँ एक ओर वैज्ञानिक 'हम साँस क्यों लेते हैं' सवाल से जुड़े उत्तर कुछ हद तक बता चुके थे, वहीं दूसरे वैज्ञानिक 'हम साँस कैसे लेते हैं' सवाल का जवाब खोज रहे थे। सन् 1806 में फ्रांस के एक दूसरे शरीर क्रिया वैज्ञानिक सीजर जुलियां जो लुइगैलोइस (Julien Jean Legallois) ने देखा कि छह दिन के खरगोश शावक के मेडुला ऑब्लान्गेटा हटाने पर उसकी श्वसन प्रक्रिया पूर्णतया रुक जाती है। इसके छह वर्ष बाद वैज्ञानिकों ने बताया कि हमारी साँस लेने की प्रक्रिया को वेगस नर्व भी प्रभावित करती है। सन् 1836 में ब्रिटेन में 18 फरवरी 1790 के दिन जन्मे तंत्रिका वैज्ञानिक मार्शल हाल अपने प्रयोगों से इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि प्राणियों में होने वाली तालबद्ध तरीके से साँस लेने का प्रक्रम किसी प्रतिवर्त क्रिया (रिफ्लैक्स एक्शन) का परिणाम है। तत्पश्चात सन् 1837 में फ्रांस में 13 अप्रैल सन् 1794 में जन्मे शरीर क्रिया वैज्ञानिक मैरी जो पियर फुअर (Marie Jean Pierre Flourens) ने बताया कि मस्तिष्क के चौथे वेंट्रिकल में मौजूद 'कैलामस स्क्रिप्टॉरियस' के शीर्ष भाग में एक मिलीमीटर से भी कम व्यास वाला एक ऐसा 'मर्म पर्व (वाइटल नॉड)' होता है जो साँस लेने की क्रिया का संचालन करता है। बहरहाल, उनके समकालीन वैज्ञानिक उनके इस विचार से सहमत नहीं थे। उनका कहना था कि यह संभव नहीं कि मात्र इतना छोटा क्षेत्र संपूर्ण श्वसन क्रिया का नियमन करता हो। इसके बाद के वर्षों में वैज्ञानिकों ने सुझाव दिया कि संभवतः साँस संबंधी रासायनिक मूल के उत्तेजन आवेग मस्तिष्क में वेगस तंत्रिका के माध्यम से पहुँचते हैं। आज यह स्पष्ट हो गया है कि वेगस तंत्रिका द्वारा स्रावित होने वाला तंत्रिका संचारक ऐसीटिलकोलीन की नवजात शिशु द्वारा जीवन की पहली साँस लेने में महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

सन् 1868 में जोसेफ ब्रुउर और ईवाल्ड हेरिंग (Josef Breuer and Ewald Hering) ने ऑस्ट्रिया की राजधानी वियना के मिलिट्री मेडिकल स्कूल में अपने अध्ययन के दौरान देखा कि फेफड़ों के एक निश्चित सीमा तक फूलते ही इनमें मौजूद तंत्रिका अंतांग (नर्व एंडिंग्स) उत्तेजित हो जाते हैं और वे वेगस तंत्रिका के माध्यम से संदेश भेजकर प्रश्वसन (साँस अंदर लेने की प्रक्रिया) को रोक देते हैं। श्वसन विज्ञान में इस प्रक्रम को हेरिंग ब्रुउर प्रतिवर्त (रिफ्लेक्स) कहा जाता है। इसके बाद श्वसन क्रिया के इस नियत कालिक संदमन (निरोध) सिद्धांत पर लंबी समयावधि तक कोई उल्लेखनीय शोध नहीं हुआ। सन् 1850 में मार्शल हाल ने सुझाव दिया कि श्वसन की तालबद्धता (रिदमिसिटी)

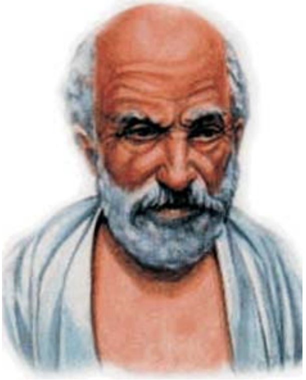

हिपोक्रेटीज

सन 1850 में मार्शल हाल ने सुझाव दिया कि श्वसन की तालबद्धता (रिदमिसिटी) कार्बन डाइऑक्साइड गैस की वजह से है। सन 1868 में जर्मन शरीर क्रिया विज्ञानी ईडुअर्ड एफ विल्हम फ्लूग़र कुत्तों पर किए अपने एक अध्ययन से इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि ऑक्सीजन की कमी और कार्बन डाइऑक्साइड की अधिकता श्वसन प्रक्रिया को उत्तेजित (स्टिमुलेट) करते हैं यानी इन दोनों अवस्थाओं में प्राणी तेजी से साँस लेने लगता है।

मरा जा पियर फुअर

अर्नहाइम आर

कार्बन डाइऑक्साइड गैस की वजह से है। सन् 1868 में जर्मन शरीर क्रिया विज्ञानी ईडुअर्ड एफ विल्हम फ्लूग़र कुत्तों पर किए अपने एक अध्ययन से इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि ऑक्सीजन की कमी और कार्बन डाइऑक्साइड की अधिकता श्वसन प्रक्रिया को उत्तेजित (स्टिमुलेट) करते हैं यानी इन दोनों अवस्थाओं में प्राणी तेजी से साँस लेने लगता है। इसके दो वर्ष बाद वैज्ञानिक हरमैन ने बिल्लियों एवं खरगोशों में उनके मस्तिष्क को खून पहुँचानी वाली वाहिकाओं में अवरोध पैदा किया। वे इन प्रयोगों से इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि साँस लेने की प्रक्रिया का संचालन कार्बन डाइऑक्साइड गैस करती है। इसके विपरीत उनके समकालीन जर्मन शरीर क्रिया वैज्ञानिक रोजेनथाल जे. ने बताया कि खून का ऑक्सीजन अंश ही साँस लेने-छोड़ने की पूरी प्रक्रिया को संचालित करता है। उनका कहना था कि श्वसन क्रिया पर कार्बन डाइऑक्साइड का सीमित प्रभाव है। आंकड़ों के आधार पर प्रथम बार सन् 1885 में मायशर-रस (Miescher & Rusch) नामक शरीर क्रिया वैज्ञानिक ने यह सिद्ध करने का प्रयास किया कि श्वसन क्रिया को मुख्य रूप से हमारे खून में मौजूद कार्बन डाइऑक्साइड गैस संचालित करती है। उनका कहना था कि कार्बन डाइऑक्साइड गैस ही श्वसन क्रिया का सामान्य उद्दीपक है। सन् 1894 में वैज्ञानिक अर्नहाइम आर. (Arnheim R.) ने कहा कि ध्वनिक गुलिका (एकॉस्टिक ट्यूबरकल) से लेकर क्वाडल मेडुला में मौजूद ओबेक्स तक का संपूर्ण जालीय पदार्थ (रेटीकुलर सब्सटांस) श्वसन क्रिया को नियंत्रित करता है। सन् 1908 में ब्रिटिश वैज्ञानिक जॉन स्कॉट हाल्डेन जिन्हें ऑक्सीजन थेरेपी का जनक भी कहा जाता है, और ब्रिटिश रोगविज्ञानी आर्थर एडविन बॉयकोट (Arthur Edwin Boycott) ने कहा कि मस्तिष्क में मौजूद श्वसन केंद्र की सक्रियता को कार्बन डाइऑक्साइड गैस के दबाव के बजाय खून की संपूर्ण अम्लीयता प्रभावित करती है। अपने इस सिद्धांत को पुष्ट करने के लिए सन् 1909 में हाल्डेन ने अपने सहयोगी क्लाउडे गोर्डन डगलस (Claude Gordon Douglas) के साथ कुछ और प्रयोग किए। इन वैज्ञानिकों ने कहा कि व्यायाम के दौरान फुफ्फुसीय वायुकोषों में कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा कम हो जाती है। ऐसी स्थिति में 'श्वसन वृद्धि' पेशियों में पैदा होने वाली लैक्टिक अम्ल के कारण होती है। हाल्डेन और डगलस को अपना समर्थन देते हुए सन् 1910-11 में जर्मन शरीरक्रिया वैज्ञानिक हंस विंटरस्टीन (Hans Winterstein) ने श्वसन क्रिया के अम्लीय सिद्धांत का समर्थन करते हुए बताया कि 'धमनीय खून की हाइड्रोजन आयन सांद्रता श्वसन क्रिया का मूल उद्दीपक है। 'तत्पश्चात, सन् 1921 में अपनी कही बात में संशोधन करते हुए विंटरस्टीन ने बताया कि खून की अम्लीयता के बजाय श्वसन केंद्रों की निजी अम्लीयता ही उनकी सक्रियता का निर्धारण करती है। इसके ठीक दो वर्ष बाद सन् 1923 में युनिवर्सिटी ऑफ़ मिशिगन के शरीरक्रिया विज्ञानी रॉबर्ट जैसल ने बताया कि प्रमस्तिष्क मेरु-द्रव (सेरीब्रोस्पाईनल फ्ल्युड) की अम्लीयता/क्षारीयता श्वसन केंद्रों की सक्रियता को प्रभावित करती है और इसकी 'पीएच' खून के 'पीएच' से भिन्न हो सकती है। प्रमस्तिष्क मेरु-द्रव अन्दरुनी मस्तिष्क आवरण के बीच होता है। यही द्रव मस्तिष्क में छोटी-छोटी गुफाओं (वैन्ट्रिकल) और मेरुदण्ड में और उसके आसपास भी होता है। बाद में वैज्ञानिकों ने बताया कि श्वसन केंद्रों की सक्रियता को प्रमस्तिष्क मेरु-द्रव की पीएच के बजाय बाह्यकोशीय द्रव की पीएच प्रभावित करती है।

सन् 1923 में यूनिवर्सिटी ऑफ लंदन से जुड़ी लिस्टर इंस्टिट्यूट के शरीर क्रिया वैज्ञानिक थॉमस लम्सडैन (Thomas Lumpsden) ने बिल्लियों में मस्तिष्क वृंत के छेदन की वजह से श्वसन क्रिया पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन किया। उनके अनुसार क्वाडल (पुच्छल) पोंस में स्थित 'प्रश्वासीदीर्घी केंद्र (अपन्यूस्टिक सेंटर) प्रश्वसन (इंसप्रिरेशन) क्रिया से जुड़ा होता है और पोंस के चंचु (रोस्ट्रल) तथा पार्श्व भागों में श्वास नियमन केंद्र

सन 1923 में यूनिवर्सिटी ऑफ लंदन से जुड़ी लिस्टर इंस्टिट्यूट के शरीरक्रिया वैज्ञानिक थॉमस लम्सडैन (Thomas Lumpsden) ने बिल्लियों में मस्तिष्क वृंत के छेदन की वजह से श्वसन क्रिया पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन किया। उनके अनुसार क्वाडल (पुच्छल) पोंस में स्थित 'प्रश्वासीदीर्घी केंद्र (अपन्यूस्टिक सेंटर) प्रश्वसन (इंसप्रिरेशन) क्रिया से जुड़ा होता है और पोंस के चंचु (रोस्ट्रल) तथा पार्श्व भागों में श्वासनियमन केंद्र (न्यूमोटैक्सिक सेंटर) होता है जो एक सीमा के बाद प्रश्वसन क्रिया को संदमित करता है।

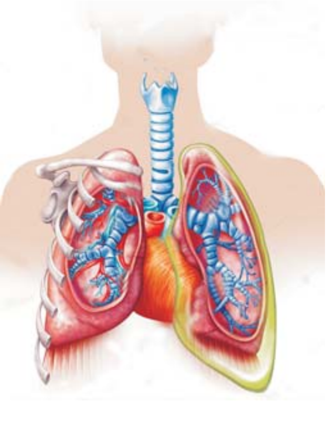

(न्यूमोटैक्सिक सेंटर) होता है जो एक सीमा के बाद प्रश्वसन क्रिया को संदमित करता है। बीसवीं शताब्दी के शेष वर्षों में साँस लेने की संपूर्ण प्रक्रिया को पूरी तरह से समझने के लिए अनेक वैज्ञानिकों ने अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। अब तक की गई खोजों से यह ज्ञात हुआ है कि हमारे मस्तिष्क के मेडुला नामक भाग में मुख्य श्वसन केंद्र है। इसमें क्रियात्मक दृष्टि से प्रश्वसन (इंसप्रिरेशन) एवं निःश्वसन (एक्सप्रिरेशन) संबंधी दो उपकेंद्र होते हैं। प्रश्वसन उपकेंद्र के उद्दीपन की वजह से प्रश्वसन यानी साँस लेने की क्रिया शुरू होती है। इसके बाद निःश्वसन उपकेंद्र का उद्दीपन प्रश्वसन उपकेंद्र को संदमित करता है। फलस्वरूप, साँस लेने की क्रिया अस्थाई रूप से रुक जाती है और फेफड़ों से साँस छोड़ने यानी निःश्वसन की क्रिया शुरू हो जाती है। दरअसल, ये दोनों उपकेंद्र एक दूसरे पर व्युत्तक्रमिक नियंत्रण रखते हैं। जैसा पहले भी उल्लेख किया जा चुका है, मेडुला में स्थित इन दो उपकेंद्रों के अलावा 'पोंस' में भी ऐसे दो केंद्र होते हैं जो साँस लेने-छोड़ने के प्रक्रम में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इन्हें प्रश्वासीदीर्घी केंद्र और श्वास नियमन केंद्र कहते हैं। 'प्रश्वासीदीर्घी केंद्र' प्रश्वसन क्रिया में सहयोग करता है और 'श्वास नियमन केंद्र' उसे संदमित करता है। यूं हम स्वेच्छा से भी अपनी साँस लेने और छोड़ने की प्रक्रिया का संचालन कर सकते हैं। इस स्वैच्छिक संचालन से संबंधित आवेग प्रमस्तिष्क प्रांतस्था (सेरेब्रल कॉर्टेक्स) में पैदा होते हैं।

कुल मिलाकर, आज हमारे पास जो जानकारी उपलब्ध है, उसके अनुसार हमारे साँस लेने की प्रक्रिया का संचालन हमारा मस्तिष्क करता है। मेडुला में स्थित तंत्रिकाओं का एक समूह जिसे हम प्रश्वसन केंद्र कहते हैं, विद्युत आवेगों के तालबद्ध एवं संवर्धित विसर्जन (फायरिंग) द्वारा फ्रैनिक (मध्यच्छद) तंत्रिकाओं के माध्यम से डायाफ्राम (मध्यपट) पेशियों और इंटरकॉस्टल (पसलियों की बीच की) तंत्रिकाओं के माध्यम से पसलियों के बीच की पेशियों को उत्तेजित करता है। ये बाद वाली तंत्रिकाएं मेरुदंड (स्पाइनल कॉलम) के ग्रीवा और वक्ष वाले हिस्सों से निकलती हैं। इन सभी तंत्रिकाओं के माध्यम से आने वाले आवेगों के कारण डायाफ्राम और इंटरकॉस्टल पेशियां संकुचित होती हैं। इन संकुचनों के कारण सीने के साथ-साथ फेफड़ा फूलता है। उसके अंदरूनी वायुदाब में गिरावट होने से वातावरण की हवा श्वसन मार्ग द्वारा फेफड़ों में पहुँचने लगती है। तत्पश्चात, फेफड़ों के एक सीमा तक फूलने के बाद उसकी दीवारों में मौजूद 'तनाव ग्राहक' उत्तेजित हो उठते हैं और वे वेगस तंत्रिका के माध्यम से प्रश्वसन केंद्र पर निरोधी प्रभाव डालते हैं। इसके साथ ही मेडुला में स्थित तंत्रिकाओं का दूसरा समूह जिसे निःश्वसन केंद्र कहते हैं, वह भी प्रश्वसन केंद्र पर संदमी प्रभाव डालता है। पोंस में स्थित श्वास नियमन केंद्र भी साँस लेने की क्रिया को संदमित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। फलस्वरूप, हमारी साँस लेने की प्रक्रिया रुक जाती है और फिर साँस बाहर छोड़ने की प्रक्रिया शुरू होती है। वास्तव में, सामान्य अवस्था में निःश्वसन यानी फेफड़ों से हवा का बाहर निकलना एक निष्क्रिय क्रिया है। दरअसल, जब प्रश्वसन केंद्र से आवेगों का विसर्जन रुक जाता है तो हमारा वक्ष और फेफड़ा अपनी प्रत्यास्थता के कारण पूर्वावस्था में आने लगते हैं। ऐसा होने की वजह से फेफड़ों में मौजूद हवा के दाब में बढ़ोतरी होने लगती है। फलस्वरूप, फेफड़ों से हवा मुख अथवा नासा मार्ग से बाहर निकलने लगती है। बहरहाल, निःश्वसन की प्रक्रिया समाप्त होते ही पुनः प्रश्वसन की क्रिया शुरू हो जाती है और इस प्रकार से साँस लेने-छोड़ने का यह चक्र जब तक हम जीवित रहते हैं, निर्बाध गति से चलता रहता है।

subhash.surendra@gmail.com

❑❑❑

पॉल बर्ट

आज हमारे पास जो जानकारी उपलब्ध है, उसके अनुसार हमारे साँस लेने की प्रक्रिया का संचालन हमारा मस्तिष्क करता है। मेडुला में स्थित तंत्रिकाओं का एक समूह जिसे हम प्रश्वसन केंद्र कहते हैं, विद्युत आवेगों के तालबद्ध एवं संवर्धित विसर्जन (फायरिंग) द्वारा फ्रैनिक (मध्यच्छद) तंत्रिकाओं के माध्यम से डायाफ्राम (मध्यपट) पेशियों और इंटरकॉस्टल (पसलियों की बीच की) तंत्रिकाओं के माध्यम से पसलियों के बीच की पेशियों को उत्तेजित करता है। ये बाद वाली तंत्रिकाएं मेरुदंड (स्पाइनल कॉलम) के ग्रीवा और वक्ष वाले हिस्सों से निकलती हैं। इन सभी तंत्रिकाओं के माध्यम से आने वाले आवेगों के कारण डायाफ्राम और इंटरकॉस्टल पेशियां संकुचित होती हैं।

ई-वेस्ट का साइलेंट खतरा

विजन कुमार पांडेय

कभी आपने गौर किया है कि कबाड़े वाले को आप जो कबाड़ बेचते हैं उसमें अब पुराने अखबारों, बोतल, डिब्बों, लोहा-लक्कड़ के साथ एक खतरनाक चीज़ ई-कचरा भी जुड़ गया है। अब लोगों को पुराना पीसी को अपग्रेड कराना झंझट लगता है। उन्हें नया पीसी खरीदना ज्यादा सुविधाजनक लगता है। लेकिन तकनीक के साथ कदमताल के इस जुनून में एक पल जरा सोचिए कि पुराने पीसी का क्या होगा? केवल पीसी ही क्यों, मोबाइल, सीडी, टीवी, रेफ्रिजरेटर, एसी जैसे तमाम इलेक्ट्रॉनिक उपकरण हमारी जिंदगी का इतना अहम हिस्सा बन गए हैं कि पुराने के बदले हम फौरन लेटेस्ट तकनीक वाला खरीदने को तैयार हो जाते हैं। लेकिन पुरानी सीडी व दूसरे ई-वेस्ट को डस्टबिन में फेंकते वक्त हम कभी नहीं सोचते कि यह कबाड़ हमारे लिए कितना खतरनाक हो सकता है क्योंकि पहली नज़र में हमें नहीं लगता की यह हम सब के लिए जानलेवा है। दरअसल यही है ई-वेस्ट का साइलेंट खतरा।

दुष्परिणाम से बेखबर

लोगों की बदलती जीवन शैली और बढ़ते शहरीकरण के चलते इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों का प्रयोग ज्यादा होने लगा है मगर इससे पैदा होने वाले इलेक्ट्रॉनिक कचरे के दुष्परिणाम से आम आदमी बेखबर है। ई-कचरे से निकलने वाले रासायनिक तत्त्व लीवर, किडनी को प्रभावित करने के अलावा कैंसर, लकवा जैसी बीमारियों का कारण बन रहे हैं खास तौर से उन इलाकों में रोग बढ़ने के आसार ज्यादा हैं जहाँ अवैज्ञानिक तरीके से ई-कचरे की रीसाइक्लिंग की जा रही है बिजली से चलने वाली चीजें जब बहुत पुरानी या खराब हो जाती हैं और उन्हें बेकार समझकर फेंक दिया जाता है तो उन्हें ई-वेस्ट कहा जाता है। घर और ऑफिस में डेटा प्रोसेसिंग, टेलीकम्युनिकेशन, कूलिंग या एंटरटेनमेंट के लिए इस्तेमाल किए जाने वाले आइटम इस कैटिगरी में आते हैं, जैसे कि कम्प्यूटर, एसी, फ्रिज, सीडी, मोबाइल, टीवी, अवन आदि। ई-वेस्ट से निकलने वाले जहरीले तत्व और गैसें मिट्टी व पानी में मिलकर उन्हें बंजर और जहरीला बना रहे हैं। फसलों और पानी के जरिए ये तत्व हमारे शरीर में पहुंच रहे हैं। ये तत्व नई बीमारियों को जन्म दे रहे हैं। सेंटर फॉर साइंस एंड इन्वाइरनमेंट(सीएसई) ने कुछ साल पहले जब सर्किट बोर्ड जलाने वाले इलाके के आसपास शोध कराया तो पूरे इलाके में बड़ी तादाद में जहरीले तत्व मिले थे, जिनसे वहाँ काम करने वाले लोगों को कैंसर होने की आशंका जताई गई थी। हमारे जीवन में इलेक्ट्रॉनिक चीजों का दखल लगातार बढ़ता जा रहा है बेशक इनसे हमारी जिंदगी आसान हुई है लेकिन इनकी वजह जमा होने वाले हजारों टन ई-कचरे के बारे में भी सोचना होगा।

इलेक्ट्रॉनिक कचरा पहाड़

जरा सोचिए बीते पाँच साल में आपने कितने मोबाइल फोन या हेडफोन खरीदे और आज वो कहां हैं? अगर हम इन इलेक्ट्रॉनिक कचरे को एक साथ ले आएं तो यह एक माउंट एवरेस्ट से ऊँचा पहाड़ बन जाएगा। इस समय दुनिया भर में सिर्फ बीस फीसदी इलेक्ट्रॉनिक कचरा ही रिसाइकिल हो रहा है बाकी का अस्सी फीसदी कचरा हमारे आस-पास के वातावरण को गंदा कर रहा है। संयुक्त राष्ट्र की मदद से हुए एक शोध के मुताबिक 2016 में दुनिया भर में 45 करोड़ टन इलेक्ट्रॉनिक कचरा पैदा हुआ अगर इस कचरे को एक जगह जमा कर दिया जाए तो माउंट एवरेस्ट से ऊँचा पहाड़ बन जाएगा।दरअसल आज फैशन का जमाना है। लोगों के पास एक नहीं चार-चार मोबाइल और लैपटॉप हैं।

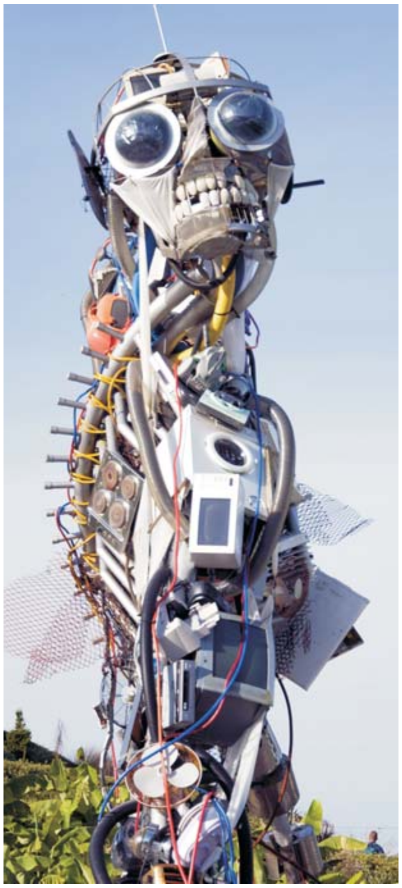

इंटरनेशनल टेलीकम्युनिकेशन यूनियन और इंटरनेशनल सॉलिड वेस्ट एसोसिएशन के शोध के मुताबिक लोगों की बढ़ती आय और सस्ते इलेक्ट्रॉनिक आइटमों के चलते ऐसा हो रहा है। इसलिए ई-कचरा सबके लिए बड़ा सिरदर्द बन चुका है। 2014 में इलेक्ट्रॉनिक कचरा 41 करोड़ टन था आशंका है कि 2021 तक यह 525 करोड़ टन पहुँच जाएगा।

ई-वेस्ट बहुमूल्य धातुओं का भंडार

इलेक्ट्रॉनिक आइटमों को रिसाइकिल करने से सोना, चांदी, तांबा, प्लेटिनम और पलेडियम जैसी बहुमूल्य धातुएं मिलती हैं। 2016 में रिसाइक्लिंग से 55 अरब डॉलर का कच्चा माल निकला था वह भी सिर्फ बीस फीसदी इलेक्ट्रॉनिक कचरे से अगर सारा इलेक्ट्रॉनिक कचरा रिसाइकिल होता तो सैकड़ों अरब डॉलर बचाए जा सकते थे। 2016 में सबसे ज्यादा इलेक्ट्रॉनिक कचरा चीन में पैदा हुआ, 72 लाख टन दूसरे नंबर पर अमेरिका रहा। प्रति व्यक्ति इलेक्ट्रॉनिक कचरा पैदा करने वाले देशों में ऑस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड सबसे ऊपर हैं। वहाँ हर साल एक व्यक्ति 173 किलोग्राम इलेक्ट्रॉनिक कचरा छोड़ता है इसमें से सिर्फ 6 फीसदी ही जमा किया जाता है। यूरोप में सबसे ज्यादा करीब 35 फीसदी इलेक्ट्रॉनिक कचरा इकट्ठा किया जाता है।

इलेक्ट्रॉनिक कचरे में पुराने बैटरी सेल, सीएफएल बल्ब, मोबाइल फोन, सीडी प्लेयर, सीडी, पुरानी मशीनें और टीवी व कम्प्यूटर तक होते हैं। जमीन पर बिखरने और पानी के संपर्क में आने से इनमें केमिकल रिएक्शन होता है और कई विषैले पदार्थ पर्यावरण में घुलते हैं। इनके संपर्क में आने से इंसान, पेड़ पौधे और जानवरों पर बुरा असर पड़ता है। ये कचरे नदी या झीलों में अन्य चीजों के संपर्क में आकर जाल सा बनाते हैं और पानी के बहाव को भी प्रभावित करते रहते हैं। संयुक्त राष्ट्र यूनिवर्सिटी की एक ताजा रिपोर्ट में कहा गया है कि पिछले पाँच साल के दौरान पूर्वी और दक्षिण-पूर्वी एशियाई देशों में ई-कचरे की मात्रा में 63 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। रिपोर्ट में इस वृद्धि की बड़ी वजह चीन के मध्य वर्ग में नए इलेक्ट्रॉनिक गैजेट्स की भूख को बताया गया है। ई-कचरे में खराब हुए कम्प्यूटर, लैपटॉप, मोबाइल फोन, रिमोट कंट्रोल और अन्य इलेक्ट्रॉनिक सामान शामिल है। यूएन की रिपोर्ट में पूर्वी और दक्षिण पूर्वी एशिया में कंबोडिया, चीन, हांगकांग, इंडोनेशिया, जापान, मलेशिया, फिलिपींस, सिंगापुर, दक्षिण कोरिया, ताइवान, थाइलैंड और वियतनाम में ई-कचरे के बारे में जानकारी जुटाई गई।

रिपोर्ट के मुताबिक 2010 से 2015 के बीच इन जगहों पर 123 करोड़ मीट्रिक टन ई-कचरा जमा हुआ 2005 से लेकर 2010 की अवधि से तुलना करें तो हालिया पाँच साल के भीतर ई-कचरे में 63 प्रतिशत का उछाल आया है। शोधकर्ताओं का कहना है कि अकेले चीन ने पाँच सालों में 67 लाख मीट्रिक टन का ई-कचरा पैदा किया और इस तरह उसके यहाँ 107 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई है। यूएन की 2014 की एक रिपोर्ट में कहा गया था कि दुनिया में जितना भी ई-कचरा पैदा होता है, उसके एक तिहाई यानी 32 प्रतिशत हिस्से के लिए केवल दो देश अमेरिका और चीन जिम्मेदार हैं प्रति व्यक्ति के हिसाब से देखें तो क्षेत्र में ई-कचरा पैदा करने में हांगकांग अव्वल है वहां 2015 में प्रति व्यक्ति 215 किलो ई-कचरा पैदा हुआ जबकि इसके बाद सिंगापुर और ताइवान का नंबर आता है।

गैर कानूनी डंपिंग जारी है

यूएन रिपोर्ट कहती है कि कई देशों में ई-कचरे से निपटने के कानून होने के बावजूद वहाँ गलत और गैरकानूनी तरीके से डंपिंग हो रही है। कई देश अपना ई-कचरा रीसाइकिल करवाने चीन भेजते हैं वहां इनमें से कई चीजों को थोड़ी मरम्मत के बाद दोबारा सस्ते दामों में बेच दिया जाता है बाकी के अंदरूनी हिस्सों को अलग कर सोने या तांबे जैसी धातुएं निकाल ली जाती हैं। ऐसे निपटारे के कारोबार के कारण पर्यावरण को भारी कीमत चुकानी पड़ रही है। जब भट्टी में ई-कचरे को जलाया जाता है तो प्लास्टिक और केमिकल के जलने से धुंआ उठता है। यह वायु को प्रदूषित करता रहता है और इससे कई हानिकारक तत्व वातावरण में घुल जाते है। आज हमारी पृथ्वी पर ई-कचरा का एक नया खतरा सामने खड़ा है जिसके निपटारे के लिए वैज्ञानिकों को गंभीरता से विचार करना चाहिए क्योंकि आज ई-वेस्ट का 99 फीसदी हिस्सा न तो सही तरीके से इकट्ठा किया जा रहा है, न ही उसकी रीसाइकलिंग ढंग से की जाती है। आमतौर पर सामान्य कूड़े-कचरे के साथ ही इसे जमा किया जाता है और अक्सर उसके साथ ही डंप भी कर दिया जाता है। ऐसे में इनसे निकलने वाले रेडियो ऐक्टिव और दूसरे

ई-कचरे के दुष्परिणाम से कोई भी अंजान नहीं है। मगर अभी तक इसे रोकने के लिए अपने देश में न तो कोई कानून है और न ही विदेश से आने वाले ई-कचरे को रोकने के लिए कोई कानून है। अगर सरकारें तेजी से बढ़ रही इस समस्या का निदान जल्द से जल्द नहीं निकालेंगी तो प्रकृति के साथ हो रहे खिलवाड़ का परिणाम हम सबको भुगतना पड़ेगा। इसलिए सबसे पहले जरुरत है एक सख्त कानून बनाने की और फिर उतनी ही सख्ती से पालन कराने की ताकि ई-कचरे की अवैध रीसाइक्लिग पर पूर्णविराम लग सके।

हानिकारक तत्व अंडरग्राउंड वॉटर और जमीन को प्रदूषित कर रहे हैं। ऐसे में सरकार को ई-वेस्ट रीसाइकलिंग के लिए कानून बनाना होगा, क्योंकि आने वाले दिनों में खतरा और बढ़ेगा। दरअसल कबाड़ी ई-वेस्ट को मेटल गलाने वालों को बेचते हैं, जो कॉपर और सिल्वर जैसे महंगे मेटल निकालने के लिए इन्हें जलाते हैं या ऐसिड में उबालते हैं। ऐसिड का बचा पानी या तो मिट्टी में डाल दिया जाता है या फिर खुले में फेंक दिया जाता है। यह सेहत के लिए काफी नुकसानदेह है। ऐसा इसलिए हो रहा है, क्योंकि भारत में रीसाइकल करने के लिए न कोई साफ कानून है और न ही गाइड लाइंस जिसको फॉलो करना अनिवार्य है। हमारे देश में सालाना करीब चार-पांच लाख टन ई-वेस्ट पैदा होता है और 97 फीसदी कबाड़ को जमीन में गाड़ दिया जाता है। स्क्रैप डीलर इस खतरनाक चेन की मुख्य कड़ी हैं, क्योंकि वे पुराने पीसी, रेडियो व टीवी कस्टमर्स से खरीदते हैं और उनके हिस्सों को अलग-अलग कर चोर बाजार में बेच देते हैं। बचे हुए सामान को कचरे में डाल दिया जाता है।

ई-कचरे के दुष्परिणाम से कोई भी अंजान नहीं है। मगर अभी तक इसे रोकने के लिए अपने देश में न तो कोई कानून है और न ही विदेश से आने वाले ई-कचरे को रोकने के लिए कोई कानून है। अगर सरकारें तेजी से बढ़ रही इस समस्या का निदान जल्द से जल्द नहीं निकालेंगी तो प्रकृति के साथ हो रहे खिलवाड़ का परिणाम हम सबको भुगतना पड़ेगा। इसलिए सबसे पहले जरुरत है एक सख्त कानून बनाने की और फिर उतनी ही सख्ती से पालन कराने की ताकि ई-कचरे की अवैध रीसाइक्लिग पर पूर्णविराम लग सके।

सरकारों से इतर हम और आप मिलकर भी इस समस्या पर काफी हद तक काबू पा सकते हैं। ई-वेस्ट से निपटने का सबसे अच्छा मंत्र रिड्यूस, रीयूज और रीसाइकलिंग का है। यानी इलेक्ट्रॉनिक्स को संभलकर और किफायत से इस्तेमाल करें, पुराने आइटम को जरूरतमंद को दे दें या बेच दें और जिन चीजों को ठीक न कराया जा सके, उन्हें सही ढंग से रीसाइकल कराएं।

मिट्टी में घुलता जहर

ध्यान रहे ई-कचरे के आधे-अधूरे तरीके से निस्तारण से मिट्टी में खतरनाक रासायनिक तत्त्व मिल जाते हैं जिनका असर पेड़-पौधों और मानव जाति पर पड़ता है। ऐसे में पौधे प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया नहीं कर पाते है जिसका सीधा असर वायुमंडल में ऑक्सीजन के प्रतिशत पर पड़ता है। इतना ही नहीं, कुछ खतरनाक रासायनिक तत्त्व जैसे पारा, क्रोमियम, कैडमियम, सीसा, सिलिकॉन, निकेल, जिंक, मैंगनीज़, कॉपर, भूजल पर भी असर डालते हैं। जिन इलाकों में अवैध रूप से रीसाइक्लिग का काम होता है उन इलाकों का पानी पीने लायक नहीं रह जाता।

दरअसल समस्या ई-वेस्ट की रीसाइकलिंग और उसे सही तरीके से नष्ट (डिस्पोज) करने की है। घरों और यहां तक कि बड़ी कंपनियों से निकलने वाला ई-वेस्ट ज्यादातर कबाड़ी उठाते हैं। वे इसे या तो किसी लैंडफिल में डाल देते हैं या फिर कीमती मेटल निकालने के लिए इसे जला देते हैं, जोकि और भी नुकसानदेह है। कायदे में इसके लिए अलग से पूरा सिस्टम तैयार होना चाहिए, क्योंकि भारत में न सिर्फ अपने देश का ई-वेस्ट जमा हो रहा है बल्कि विकसित देश भी अपना कचरा यहीं जमा कर रहे हैं। विकसित देश इंडिया को डंपिंग ग्राउंड की तरह इस्तेमाल कर रहे हैं क्योंकि उनके यहां रीसाइकलिंग काफी महंगी है।

vijonkumarpanday@gmail.com

अब युद्ध भी हो गए हैं हाईटेक

डॉ.विनीता सिंघल

आए दिन कश्मीर में होने वाले आतंकवादी हमलों को भले ही कायरतापूर्ण हमलों की संज्ञा दी जाए लेकिन आतंकवादियों द्वारा प्रदर्शित तैयारी, चपलता और क्षमता वही होती है जिसे अभी तक सिपाहियों की धरोहर कहा और समझा जाता था। वे न केवल घातक हथियारों से लैस होते हैं बल्कि पूरी तरह प्रशिक्षित भी होते हैं। उनके द्वारा प्रदर्शित उच्च स्तरीय कमांड और नियंत्रण, उत्तरजीविता, स्थितिगत जागरूकता, मारक क्षमता, गतिशीलता और प्रशिक्षण, उनके प्रतिद्वन्द्वी पुलिस बल या आतंकविरोधी दस्ते से किसी भी तरह कम नहीं होता।

यद्यपि ऐसी क्षमता की आवश्यकता जन-जीवन की रक्षा करने वालों (जैसे कि पुलिस और पैरामिलिट्री बल) को है जिससे वे आज के आतंकवादियों द्वारा फैलाये जा रहे आतंकवाद और उनके विध्वंसक कारनामों का मुकाबला कर सकें। इसके लिए जरूरी है कि सैन्य बलों को अत्याधुनिक तकनीकियों से सुसज्जित किया जाए। इसीलिए भविष्य के सिपाहियों को आधुनिकतम युद्ध कौशल का प्रशिक्षण दिया जा रहा है और उनकी सुरक्षा के इन्तजाम किये जा रहे हैं। सेना के साथ-साथ पुलिस बलों और आतंकवाद रोधी दस्तों की ओर भी ध्यान दिया जा रहा है।

प्रत्येक सिपाही को आधुनिकतम बनाने और उसकी क्षमताओं को बढ़ाने का पहला विचार पिछली शताब्दी के अन्तिम दशक में अमेरिका में आया था। मुख्य प्राथमिकता थी घातकता, स्वयं सुरक्षा, उन्नत कमांड और नियन्त्रण। पहली बार, सैनिकों के लिए ऐसे उपकरण बनाने के बारे में सोचा गया जो अपने आप में सम्पूर्ण हों बिल्कुल किसी 'रोबोकॉप' की तरह। जून 2007 में, अमेरिका ने अपने आधुनिक सिपाहियों जिन्हें 'लैंड वारियर एंड माउंटेड वारियर सिस्टम' का नाम दिया गया है, को पहली बार ईराक के मुकाबले के लिए उतारा था। आज भारत की स्थिति यह है कि एक तरफ पाकिस्तान आतंकी वार कर रहा है तो दूसरी तरफ चीन आंखें दिखा रहा है। कश्मीर में रोज सैनिक देश की रक्षा में शहीद हो रहे हैं। हालांकि भारत ने सर्जिकल स्ट्राइक द्वारा पाकिस्तान को बता दिया है कि उसमें उनके घर में घुस कर मारने की क्षमता है। ऐसे अभियानों में सफलता पाने के लिए जरूरत होती है उच्च टेक्नॉलॉजी की। आज हमारे पास ऐसी अनेक प्रौद्योगिकियाँ हैं जो युद्ध की विकट परिस्थितियों में हमारी सहायता कर सकती हैं।

शारीरिक सुरक्षा के लिए

भविष्य में सिपाहियों को नये प्रकार के कपड़ों, नये हेल्मेट, नये गॉग्ल्स की जरूरत है। कहने का तात्पर्य यह है कि उन्हें सिर से लेकर पैर तक बिल्कुल एक नया रूप देने की जरूरत है। सिपाहियों को विभिन्न प्रकार की परिस्थितियों और खतरों में सुरक्षित रखने के लिए जिस तरह के

कपड़ों की जरूरत है, उनमें बेहतर आराम, अधिक गतिशीलता, दुश्मन से अधिक सुरक्षा, मौसम से सुरक्षा, हल्का भार और कम कीमत जैसे गुण होने चाहिए। गोली के प्रभाव से उत्पन्न ऊर्जा को तेजी से खत्म करने की क्षमता में सुधार की जरूरत है। इसके अलावा, इस पर आग, मौसम, पानी और रसायनों का भी कम से कम प्रभाव होना चाहिए। एक अन्य सबसे प्रमुख आवश्यकता है इसका जटिल मानव शरीर रचना के अनुसार होना जिसमें कठिन से कठिन परिस्थिति में भी सुरक्षा प्रदान कर सके।

पायलेटों के लिए एंटी जी सूट

एयर शो में लड़ाकू विमानों द्वारा किये जाने वाले करतब हमें हतप्रभ कर देते हैं। भारतीय वायुसेना में शामिल लड़ाकू हवाईजहाज जैसे F16, मिग, जगुआर, Su30, हॉक और एल.सी.ए. तेजस बहुत ऊंचाइयों पर उड़ने में सक्षम हैं जहाँ ये पराध्वानिकी गति से उड़ते हैं। वायुसेना के फाइटर पायलट इन पर ही युद्धाभ्यास करते हैं। इसलिए फाइटर पायलेट बनना सरल नहीं है। लड़ाकू विमानों के पायलटों को अनेक पर्यावरणीय और प्रचालन तनावों को झेलना पड़ता है। इसके अलावा उन्हें पृथ्वी के गुरुत्व बल का भी सामना करना पड़ता है। युद्धाभ्यास के दौरान वायुयान के एक साथ ऊपर जाने या नीचे आने के समय, पायलट का शारीरिक भार कई बार, कई गुना अधिक हो जाता है और सारा खून शरीर के निचले भाग (टाँगों) में जमा होने लगता है। बढ़ते भार के कारण हृदय भी सही ढंग से काम नहीं करता। परिणाम स्वरूप, सिर और आँखों तक रक्त की आपूर्ति ठीक से नहीं हो पाती। इसका पहला प्रभाव आँखों पर और फिर मस्तिष्क पर होता है। प्रारम्भिक अवस्था में, पायलट को धुँधला दिखाई देने लगता है। यह अवस्था 'ग्रे आउट' कहलाती है। यदि इसके बाद भी रक्त की आपूर्ति और कम होती जाती है तो पायलट को दिखना और भी कम हो जाता है। ये अवस्था 'ब्लैक आउट' कहलाती है। हालाँकि पायलट अभी संज्ञान की अवस्था में होता है लेकिन अगर गुरुत्व बल और बढ़ता है तो मस्तिष्क तक रक्त की आपूर्ति न होने के कारण पायलट अपना होश खो बैठता है। यह अवस्था G-LOC अर्थात् जी इंड्यूस्ड लॉस ऑफ कॉन्शसनैस कहलाती है। यह अवस्था पायलट और वायुयान दोनों के लिए ही घातक सिद्ध हो सकती है।

पायलटों में गुरुत्व बल को सहने की क्षमता बढ़ाने के बहुत से तरीके हैं। इनमें से ही एक हैं एंटी जी सूट। सबसे पहले पायलटों के लिए एंटी जी सूट की आवश्यकता 1930 के दशक में अनुभव की गयी थी और अगले दशक में इस दिशा में काफी कुछ काम किया गया। सबसे पहला एंटी जी सूट 1941 में विल्बुर आर. फ्रेंक्स ने यूनिवर्सिटी ऑफ टोरॉन्टो के बांटिंग एंड बेस्ट इंस्टीट्यूट में विकसित किया था। पारम्परिक एंटी जी सूट, फ्लाइंग सूट के ऊपर पहनी जाने वाली एक कसी हुई ट्राउजर होती है जिसमें फूलने वाली थैलियाँ (आमतौर से पाँच) होती हैं जो दबाव बढ़ने पर एक एंटी जी वाल्व द्वारा फुला दी जाती हैं। ये थैलियाँ आपस में जुड़ी होती हैं और कपड़े की परत के नीचे लगी होती हैं। एंटी जी सूट फूलने के बाद शरीर के निचले हिस्सों पर दबाव डालता है और रक्त को वहाँ जमा नहीं होने देता। आरम्भ में विकसित एंटी जी सूट में पानी भरी थैलियाँ होती थीं लेकिन अब पानी की जगह हवा का प्रयोग किया जाने लगा है। हवा-भरे सूट, पानी-भरे सूट की जगह हल्के होते हैं।

जैसे-जैसे समय के साथ-साथ लड़ाकू विमानों की रफ्तार बढ़ती गयी, उसी के हिसाब से एंटी जी सूट भी नया आकार लेते गये। अब अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर फुल कवरेज एंटी जी सूट (एफसीएजीएस) बनाये जा चुके हैं जिनके सीमित अनुप्रयोग हैं। ईगल (एन्हान्स्ड एंटी जी लोअर एसेम्बली), स्टिंग (सस्टेंड टॉलरेंस और इन्क्रीज्ड जी), एफ.सी.ए.जी.टी.सी. (फुल कवरेज एंटी जी ट्राउजर्स) और एटैग्स (एडवान्स्ड टेक्नॉलॉजी एंटी जी सूट) उनमें से कुछ हैं।

बुलेटप्रूफ जैकेट

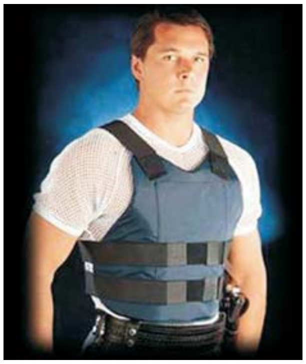

मुंबई में 26 नवम्बर, 2008 को आतंकवादियों का सामना करते हुए 14 पुलिसकर्मी शहीद हो गये और इसका सबसे बड़ा कारण यह बताया गया कि उनके पास एके-47 राइफल से निकलने वाली गोलियों को झेलने में सक्षम बुलेटप्रूफ जैकेट नहीं थी। किसी भी हथियार से निकलने वाली गोली की घातकता, उसकी गतिज ऊर्जा पर निर्भर करती है। उच्च्व गतिज ऊर्जा वाली गोली भले ही बुलेटप्रूफ जैकेट या आर्मर प्लेट द्वारा रोक दी जाए, लेकिन तब भी उसमें इतनी सामर्थ्य होती है कि उसके धक्के से आदमी जमीन पर गिर जाता है। तीव्र वेग और उच्च्व गतिज ऊर्जा की गोली यदि बहुत पास से चलाई जाए तब भी बुलेटप्रूफ जैकेट कई बार बेकार सिद्ध होती है। यही कारण है कि उच्च्व गुणवत्ता की 'कोफलर बुलेटप्रूफ जैकेट' पहने होने के बावजूद भी एन.एस.जी. कमांडो गोली की मार को नहीं सह पाते। यही कारण है कि आजकल जैकेट बनाने के पदार्थ पर विशेष ध्यान दिया जा रहा

है। ये आमतौर पर उच्च दृढ़ता, और अपघर्षण प्रतिरोधी कपड़े से बनाई जाती हैं। यह कपड़ा सामान्यतया जलवायविक परिस्थितियों (गर्मी, वर्षा, नमी), कीटों, आग और पराबैंगनी विकिरण से बचाता है। जैकेटों के भीतरी आवरण पर विशेष ध्यान दिया जाता है जो नमी और पानी से बचाता है। आजकल सभी बुलेटप्रूफ जैकेट अतिरिक्त सुरक्षा के उद्देश्य से सिरैमिक प्लेटों से प्रबलित पी.यू. लेपित नाइलॉन या केवलर से बनी होती है। पुलिस वाले आमतौर से दो प्रकार की जैकेटों का प्रयोग करते हैं। कुछ जैकेटें तो एक विशेष कपड़े (केवलर) की बनी होती हैं जो छोटे शस्त्रों जैसे 9 एमएम पिस्टल से निकलने वाली गोली के प्रघात से बचाती हैं। ऐसी जैकेटों का भार लगभग 3 किलोग्राम होता है।

दूसरी प्रकार की जैकेटों में तीन परत होती हैं जिनका उपयोग सैन्य बलों में किया जाता है जिन्हें एके 47 राइफलों, एसएलआर या सेल्फ-लोडिंग राइफल और हल्की मशीनगनों आदि से सुरक्षा की जरूरत होती है। इनका भार लगभग 10 किलोग्राम होता है और ये बुलेट प्रूफ स्टील, सिरैमिक प्लेटों और पॉलीइथिलीन प्लेटों की बनी होती हैं।

लम्बे समय से प्रयोग की जा रही स्टील और फाइबर ग्लास की बनी बुलेटप्रूफ जैकेट न केवल 10 किग्रा भारी होती हैं बल्कि युद्ध के समय गतिशीलता में भी बाधा डालती हैं। वैसे भी आज ऐसी बुलेटप्रूफ जैकेटों की जरूरत है जो एके-47 जैसी राइफलों से रक्षा कर सकें। भारत में, विज्ञान और प्रौद्योगिकी मन्त्रालय के अन्तर्गत नेशनल बैम्बू मिशन के अन्तर्गत बाँस से ऐसी जैकेट बनाने के प्रयास किए जा रहे हैं क्योंकि इसकी दृढ़ता सामर्थ्य बहुत अधिक होती है। वैसे भी भारत विश्व में सबसे बड़ा बाँस उत्पादक देश है इसलिए इससे भविष्य में कम कीमत, हल्की और उच्च प्रघात सहने वाली बुलेटप्रूफ जैकेट बनाने के प्रयास किये जा रहे हैं।

सुरक्षा प्रदान करने के लिए सिपाहियों के लिए ऐसे मल्टी-लेयर कपड़े बनाने के प्रयास किये जा रहे हैं जिसमें सबसे नीचे पहने जाने वाले कपड़ों में जीवाणुरोधी गुण होंगे जो उन्हें किसी भी प्रकार के संक्रमण से बचाएँगे। इसके ऊपर होगी जल-रोधी, मच्छर-रोधी, आग-रोधी रिपस्टॉम कपड़े की परत। इसके ऊपर होगी नर्म प्राक्षेपिक वस्ट जो घातक हथियारों से Level III A की सुरक्षा प्रदान करेगी। धड़, गर्दन, कमर और कूल्हे की सुरक्षा के लिए भी एक कठोर आर्मर होगा जो 5.56 एमएम और 7.62 एमएम की गोलियों से बचाएगा। आने वाले समय में बुलेटप्रूफ जैकेट बनाने के लिए एक स्टील से भी कठोर किन्तु हल्के फाइबर पर भी प्रयोग किये जा रहे हैं। वास्तव में, नैनोटेक्नॉलॉजी, कार्बन नैनो ट्यूब्स के रूप में एक बेहतर विकल्प प्रदान कर सकती है जिन्हें काफी लम्बा बनाया जा सकता है और कपड़े के रूप में बुना भी जा सकता है। ये कार्बन नैनो ट्यूब्स स्टील की अपेक्षा 200 गुना मजबूत होती हैं और इनका द्रव्यमान दस गुना कम होता है। इनमें असाधारण संचालक और तापीय गुण भी होते हैं। तरल आर्मर बनाने के लिए सिलिकॉन नैनों कणों के साथ एक निश्चित मोटाई तक द्रव भी भरा जा सकता है जो चाकू आदि के घाव से सुरक्षा प्रदान कर सकता है।

हैल्मेट

सदियों से सिपाहियों का ट्रेडमार्क बने 'हेल्मेट' को भी समय के अनुसार नया रूप देने की जरूरत है। इन्हें भी हल्का, उत्तम प्राक्षेपिक सुरक्षा प्रदान करने वाला और आरामदायक बनाने के प्रयास किये जा रहे हैं। पहली पीढ़ी के हेल्मेट जिन्हें आमतौर से 'स्टील पॉट' हेल्मेट कहते हैं, द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान विकसित किये गये थे। इन्हें 1980 के दशक के आरम्भ में अभिकल्पित केवलर फाइबर से बने पर्सोनेल आर्मड सिस्टम फॉर ग्राउंड ट्रईप्स (पी.ए.एस.जी.टी.) हेल्मेट में बदला गया। सबसे आधुनिकतम हेल्मेट है एडवांस्ड कमबाट हेल्मेट (ए.सी.एच.) जिसका प्रयोग अमरीकी सिपाही कर रहे हैं जिनका भार पहले प्रयोग किये जा रहे हेल्मेट की अपेक्षा एक किलोग्राम कम है और इनसे सिर की पूरी सुरक्षा के साथ-साथ देखने में भी कोई कठिनाई नहीं होती। भविष्य में सिपाहियों के लिए इससे भी कम भार वाले, पूर्ण रूप से सुरक्षा प्रदान करने वाले, कम गर्मी उत्पन्न करने वाले, देखने में कठिनाई न उत्पन्न करने वाले हेल्मेट बनाने के प्रयास किये जा रहे हैं।

भविष्य की सैन्य प्रणालियाँ : थर्मल इमेजिंग अर्थात् अँधेरे में देखने की कला

किसी भी युद्ध-क्षेत्र में सबसे जरूरी होता है शत्रु के ठिकानों का एकदम सही-सही पता लगाना। कारगिल और लेह जैसे दुरूह और दुर्गम स्थानों पर परम्परागत विधियों से इनका सही-सही पता लगाना बहुत कठिन कार्य है। अब ऐसे स्थानों के लिए थर्मल इमेजिंग जैसी उच्च टेक्नॉलॉजी बहुत सहायता कर रही है। थर्मल

इमेजिंग का अर्थ है उत्सर्जित ताप का प्रतिबिम्बन कर शत्रु की स्थिति का सही-सही पता लगाना। मानव-शरीर से निरन्तर उष्मा का उत्सर्जन होता रहता है। इस उष्मा का संसूचन कर इसे मापा जा सकता है। रात्रि में शत्रु प्रायः बेखबर रहता है इसलिए थर्मल इमेजिंग के लिए रात्रि का समय बहुत उपयुक्त माना गया है। शरीर को भली-भाँति ढक लेने के बाद भी शरीर से ताप उत्सर्जित होता रहता है। सोते समय मनुष्य निष्क्रिय रहता है इसलिए उसके शरीर से उत्सर्जित उष्मा की मात्रा भी कम होती है। जहाँ एक सक्रिय मनुष्य द्वारा उत्सर्जित उष्मा को थर्मल सूचकांक के द्वारा 5000 फीट की ऊँचाई तक संसूचित किया जा सकता है। वहीं निष्क्रिय मनुष्य द्वारा उत्सर्जित उष्मा को केवल 2000 फीट तक ही संसूचित किया जा सकता है। किन्तु रात्रि में थर्मल इमेजिंग का कार्य प्रायः अबाधित रहता है।

थर्मल इमेजर किसी भी वस्तु से निकलने वाले इन्फ्रारेड या अवरक्त विकिरणों (आई.आर.) का पता लगते हैं और इसके आधार पर वास्तविक प्रतिबिम्ब बनाते हैं। इन प्रतिबिम्बों को 'थर्मल इमेज' कहते हैं क्योंकि इनसे पृष्ठभूमि के विरुद्ध वस्तु के थर्मल प्रोफाइल का पता चलता है। थर्मोग्राफिक कैमरे से देखने पर गर्म वस्तुएँ, ठंडी पृष्ठभूमि के विरुद्ध स्पष्ट दिखाई देती हैं। यही कारण है कि इनके जरिए दिन या रात में मनुष्य या अन्य गर्म रक्त जीवों को सरलता से देखा जा सकता है। इनके इसी गुण के कारण इनका उपयोग मिलिट्री और सुरक्षा सेवाओं में किया जाता है।

थर्मल इमेजर में एक 'इन्फ्रारेड डिटेक्टर' होता है। यह एक अर्धचालक युक्ति होती है जो इन्फ्रारेड विकिरण का पता लगाकर उसे विद्युत संकेत में बदल सकती है। तापक्रम बढ़ने के साथ-साथ किसी वस्तु से निकलने वाली आई.आर. ऊर्जा बढ़ती जाती है। यह ऊर्जा पदार्थ के अभिलक्षणों पर भी निर्भर करती है। इसलिए, विभिन्न वस्तुओं से निकलने वाली आई.आर. ऊर्जा की मात्रा अलग-अलग होती है जिससे उन्हें पहचानना सरल हो जाता है। थर्मल इमेजर के निष्पादन पर जलवायविक परिस्थितियों जैसे कि वर्षा, कोहरा आदि का भी प्रभाव पड़ता है। आई.आर. डिटेक्टर दो प्रकार के होते हैं ठंडे और गर्म। ठंडे डिटेक्टर, फोटॉन डिटेक्टर होते हैं। ये अर्धचालक युक्तियाँ होती हैं। ये डिटेक्टर सामान्य तापक्रम पर बहुत अधिक शोर उत्पन्न करते हैं इसलिए इनसे बेहतर काम लेने के लिए इन्हें 77K तक ठंडा करना पड़ता है। गर्म आई.आर. डिटेक्टर, ऐसे थर्मल डिटेक्टर होते हैं जिन्हें 77K तक ठंडा करने की जरूरत नहीं होती। ये छोटे, हल्के और कम विद्युत ऊर्जा लेने वाले थर्मल इमेजर, छोटी दूरी के अनुप्रयोगों के लिए उपयुक्त होते हैं। अब तक थर्मल इमेजर्स की तीन पीढ़ियाँ विकसित की जा चुकी हैं। इनका अधिकतर उपयोग मिलिट्री में युद्ध के दौरान निगरानी और टोह लेने के लिए किया जाता है। जमीन में बिछाई गयी बारूदी सुरंगों से निकलने वाली इन्फ्रारेड ऊर्जा के कारण, उनका भी पता लगाया जा सकता है। मिसाइल एप्रोच वार्निंग सेंसर्स के जरिए मिसाइलों का भी पता लगाना सम्भव होता है।

देहरादून स्थित डी.आर.डी.ओ. की एक प्रयोगशाला इंस्ट्रूमेंट रिसर्च एंड डिवेलपमेंट एस्टेबलिशमेंट (आई.आर.डी.ई.) ने मिलिट्री और सिविलियन दोनों ही क्षेत्रों में उपयोग के लिए विभिन्न प्रकार के थर्मल इमेजर बनाए हैं :

● *हेल्मेट माउंटेड थर्मल इमेजर कैमरा :* इन्हें विशेष रूप से आग से बचाव कार्यों आदि के लिए बनाया गया है। थर्मल इमेजर कैमरा हेल्मेट में लगे होने के कारण फायर फाइटर के दोनों हाथ काम करने के लिए मुक्त होते हैं। ● *हैंड-हेल्ड थर्मल इमेजर :* बायनोकुलर युक्त एच.एच.टी.ई 12V की रीचार्जेबिल बैटरी के साथ लगातार तीन घंटों तक काम कर सकते हैं। ● *टी-72 टैंकों के लिए कमांडर्स थर्मल इमेजर :* भारतीय सेना के पास बड़ी संख्या में टी-72 टैंक हैं जिन पर टी के एन 3 लगे हुए हैं। टी के एन 3 कैमरा डिस्प्ले में एक डे साइट और आई.सी. ट्यूब आधारित नाइट साइट होती है। अब इस आई.सी. ट्यूब आधारित नाइट साइट को तीसरी पीढ़ी के थर्मल इमेजर से बदल दिया गया है। थर्मल इमेजिंग डिटेक्टर को नाइट फ्लाइंग हेलीकॉप्टर में लगाकर भी प्रयोग में लाया जाता है। विकसित देशों की सेनाएँ इस तकनीकी का प्रयोग वर्ष 1981 से ही कर रही हैं। अब भारतीय सेना में भी इसका प्रयोग प्रारम्भ कर दिया गया है।

लेजर रेंज फाइंडर बायनाकुलर

लेजर रेंज फाइंडर एक ऐसी युक्ति होती है जिसमें किसी वस्तु की दूरी का पता लगाने के लिए लेजर बीम का प्रयोग किया जाता है। आमतौर से लेजर रेंजफाइंडर का उपयोग उड़ान के दौरान किया जाता है जबकि एक लेजर पल्स को एक संकरी बीम में लक्ष्य की ओर भेजा जाता है और पल्स के लक्ष्य से भेजने वाले तक वापस आने में लगने वाले समय को माप कर दूरी का अन्दाजा लगाया जाता है। मिलिट्री रेंजफाइंडर 2 कि.मी. से 25 किमी. की दूरी तक के लिए काम करते हैं। इनमें कई बार बायनाकुलर या मोनोकुलर भी लगा होता है। जब किसी रेंजफाइंडर में मैग्नेटिक डिजीटल मैग्नेटिक कम्पास भी लगा होता है तो यह लक्ष्य

की मैग्नेटिक दिगंश, ढाल और ऊंचाई (लम्बाई) भी बताने में सक्षम होता है। कुछ रेंजफाइंडर लक्ष्य की गति भी मापने में सक्षम होते हैं। बल्कि कुछ रेंजफाइंडर तो मापे गये आँकड़ों को कम्प्यूटर में भी हस्तांतरित करने की क्षमता रखते हैं। कुछ स्थानों पर, उदाहरणार्थ कश्मीर की पहाड़ी घाटियों में प्रायः लक्ष्य का आकार बहुत छोटा होता है। इन पर प्रहार करने के लिए इनकी सही स्थिति ज्ञात होना आवश्यक होता है। इस कार्य के लिए उच्च टेक्नॉलॉजी का लेजर रेंज फाइंडर बायनाकुलर बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ है। इस बायनाकुलर का उपयोग करने के लिए दो कमांडो सैनिकों की आवश्यकता होती है। एक सैनिक के हाथ में ग्लोबल पोजीशनिंग सिस्टम (जी.पी.एस.) उपकरण का हैंड-हेल्ड सेट रहता है तो दूसरा सैनिक अपनी आँखों पर लेजर रेंज फाइंडर बायनाकुलर लगाए रहता है। ये इतने शक्तिशाली होते हैं कि इनसे 5 किलोमीटर दूर खड़े व्यक्ति का चेहरा भी साफ-साफ देखा जा सकता है। एक सिपाही इस उपकरण से प्राप्त लक्ष्य की दूरी एवं दिशा को प्लॉट करता है और वह लक्ष्य की स्थिति ठीक-ठीक बताने के लिए एक स्पॉटर (संकेत सिग्नल) फायर करता है जिसकी सहायता से तोपों (आर्टिलरी) की स्थिति में स्वतः संशोधन कर निशाना साधकर उन्हें नष्ट किया जा सकता है। ऑर्टिलरी कमांडर एक डिजीटल कम्युनिकेशन सेट के द्वारा संचार सन्देशों का आवश्यकतानुसार गूढ़लेखन-अगूढ़न (एनक्रिप्शन-डिस्क्रशन) कर अपने बेस पर भेजता रहता है ताकि शत्रु इन सन्देशों का अर्थ न समझ सके।

लेजर निर्देशित बम

शत्रु के भू-स्थित ठिकानों पर विमान से आक्रमण करने के लिए लेजर निर्देशित बम उच्च टेक्नॉलॉजी का एक अद्वितीय उदाहरण है। लेजर बीम प्रकाश की गति से चलती हैं और इसकी एक विशेषता यह है कि इसका किरण-पुंज अनन्त दूरी तक सीधा ही जाता है। साधारण प्रकाश की तरह झुकता नहीं है। परिणामतः, एक बार फायर करने के बाद लेजर से बचना असम्भव होता है। शत्रु लक्ष्य को लेजर किरण-पुंजों से आलोकित कर बमवर्षक विमान इन्हीं किरण पुंजों के सहारे बमों तथा रॉकेटों को निर्देशित कर उन्हें सीधा लक्ष्य की ओर प्रहार कर उन्हें ध्वस्त कर सकते हैं।

रात में उड़ने में सक्षम हेलीकॉप्टर :

कारगिल जैसे अन्य दुर्गम ठिकानों पर जहाँ शत्रु ने अधिकार कर रखा हो, सैनिक टुकड़ियों को गुप्त रूप से उतारना एक जोखिम भरा कार्य होता है। इसके लिए प्रायः हेलीकॉप्टरों का उपयोग किया जाता है। दिन के उजाले में शत्रु की आर्टिलरी इनको मारकर गिरा सकती है इसलिए उच्च टेक्नॉलॉजी की सहायता से इन हेलीकॉप्टरों को रात में उड़ान भरने के योग्य बनाया गया है और पायलटों को उच्च टेक्नॉलॉजी पर आधारित इन उपकरणों की सहायता से रात में हेलिकॉप्टर उड़ाने का प्रशिक्षण दिया जाता है। यह प्रशिक्षण सिमुलेटर आधारित होता है ताकि ये हेलीकॉप्टर पायलट इस चुनौती भरे कार्य के लिए पूरी तरह पारंगत होकर अपना कार्य बखूबी कर सकें।

इमेज इंटेंसिफायर

कुछ वर्ष पहले तक शत्रु अधिकृत अपनी सैनिक चौकियों से शत्रु को भगाने के लिए बम-वर्षक विमानों को अधिकतर दिन में ही आक्रमण करना पड़ता था। इसके लिए इन विमानों को काफी नीची उड़ान भरनी पड़ती थी और कई बार वे शत्रु की आर्टिलरी फायर का निशाना बन जाते थे। किन्तु अब मिराज विमानों में उसके 'सामने की ओर देख पाने वाले रडार' की सहायता से रात्रि में भी आक्रमण कर पाना सम्भव हो सका है और इसमें बहुत सफलता भी प्राप्त हुई है। विशेष प्रकार के नाइट फ्लाइंग ग्लासेज तथा प्रतिबिम्ब की प्रतिछाया को अधिक स्पष्ट करने वाले उपकरण इमेज इंटेन्सिफायर युक्त हल्की विमान आरोहित मशीनगन की सहायता से भी इन ठिकानों पर गोलियों और राकेटों का सटीक एवं अचूक प्रहार कर पाना सम्भव हो सका है।

इमेज इंटेंसिफशयर ऐसी युक्तियाँ होती हैं जो कम प्रकाश में भी देखने में सहायता करती हैं। इनका उपयोग नाइट-विजन गॉगेल्स के साथ-साथ टेलीस्कोप आदि अन्य उपकरणों में भी किया जाता है। इमेज इंटेसिफायर आस-पास के प्रकाश को इलेक्ट्रॉनों में बदलने के लिए एक फोटोकैथोड का प्रयोग करता है और फिर फोटोन में बदलने से पहले संकेत को प्रबल बना देता है। इनका उपयोग सबसे पहले द्वितीय विश्वयुद्ध के समय हुआ था। अब तक इनकी चार पीढ़ियाँ विकसित की जा चुकी हैं।

इलेक्ट्रॉनिक काउंटर-काउंटर मेजर

अपने विमानों को शत्रु की मिसाइलों एवं तोपों के प्रहार से बचाने के लिए जिस उच्च टेक्नॉलॉजी की सहायता ली जाती है उसे इलेक्ट्रॉनिक काउंटर-काउंटर मेजर कहते हैं। इन

उपकरणों की सहायता से शत्रु द्वारा प्रस्तुत किये गये इलेक्ट्रॉनिकी अवरोधनों का अवरोधन कर अपने विद्युत चुम्बकीय वर्णक्रम का सफल उपयोग कर पाना सम्भव हो जाता है। ई.सी.सी.एम. इलेक्ट्रॉनिकी युद्ध का एक महत्वपूर्ण अंग है। सन् 1991 के खाड़ी युद्ध में पहली बार इसका सफल प्रयोग किया गया था और तब से प्रत्येक आधुनिक सेना में इसका उपयोग किया जाने लगा है।

संचार आधुनिकीकरण

यद्यपि प्रत्येक सिपाही एक नेटवर्क-केन्द्रित युद्ध प्रणाली का एक हिस्सा होता है और अपनी गतिविधियों को नियन्त्रित करने के लिए स्वतन्त्र होता है, वहीं वह एक मिशन का भी हिस्सा होता है। इसलिए, उसके लिए एक अच्छी, प्रभावी, अवरोध-प्रूफ और शोर मुक्त संचार सेवा जरूरी हो जाती है। सुरक्षात्मक हैडगियर के विकास और सिर में मानव संचार इनपुट की उपस्थिति के कारण, सभी प्रकार का संचार उन्नयन, हैडगियर आवश्यकताओं के अनुरूप होना चाहिए। सक्रिय शोर अपकर्ष प्रणाली, सर्किट के जरिए इलेक्ट्रॉनिक बातचीत, बहुत शोर के समय निष्क्रिय क्षीणन, एक या अनेक माइक्रोफोन, बहुनेटवर्क चयन, दीर्घकालिक विद्युत-स्रोत, क्लोज कम्बाट रेडियो और संचार परास भविष्य में सिपाहियों की अपेक्षा सूची में है। इसके अतिरिक्त, संचार केवल माइक्रोफोन-आधारित दूरस्थ संचार तक ही सीमित नहीं होना चाहिए, बल्कि इसमें सुनने योग्य बाह्य वार्निंग टोन सुनने की क्षमता भी होनी चाहिए। युद्ध के समय भली भांति काम करने के लिए, प्रणाली पर वर्षा, आर्द्रता, तरंगों और पानी के कारण उत्पन्न शोर आदि का प्रभाव नहीं होना चाहिए। संचार प्रणाली की व्यवस्था सुरक्षात्मक हैड गियर के साथ, उसी के अनुरूप अभिकल्पित की जानी चाहिए। इसे या तो हैड गियर के नीचे एक पट्टे के रूप में लगाया जाना चाहिए या फिर गर्दन में एक बैंड के साथ बाँधा जाना चाहिए। विभिन्न पोशाकों और सुरक्षात्मक गियर के साथ संचार का समावेश एक बहुत बड़ी चुनौती है।

आमतौर से संचार में व्यवधान की कठिनाइयाँ आती हैं। लेकिन आशा है कि भविष्य में सैनिकों को इन कठिनाइयों का सामना नहीं करना पड़ेगा। फ्रीक्वेंसी बढ़ाकर या दूसरे नैट पर जाकर अवरोध को दूर किया जा सकता है। अन्तर्रोध को भी फ्रीक्वेंसी बढ़ाकर दूर किया जा सकता है लेकिन अधिकांश सुरक्षित नेटवर्क संचार में, एन्क्रिप्शन को सबसे बेहतर विकल्प माना जाता है। सेना में सारा डाटा कोडित या कूट रूप में स्थानांतरित किया जाता है जिसे रिसीवर सिरे पर पुनः डिकोड किया जाता है। इन सब उन्नत लक्षणों के साथ, सम्पूर्ण संचार प्रणाली का प्रयोग भी सरल होना चाहिए, जिसे बटन दबाते ही नियन्त्रित किया जा सके और जिसमें बिजली का खर्च भी कम हो। इसके अतिरिक्त समूची प्रणाली इतनी भारी भी नहीं होनी चाहिए कि वह सिपाही के लिए एक अतिरिक्त भार बन जाए जिसे उठाकर चलना ही कठिन हो जाए।

भारत का एफ-इन्सस (फ्यूचरिस्टिक इंफेंट्री सोल्जर एज ए सिस्टम) कार्यक्रम

एफ-इन्सस भारतीय पैदल सेना के सिपाहियों को आधुनिक हथियारों के साथ आधुनिकतम उपकरण जैसे संचार नैटवर्क और युद्ध क्षेत्र में तुरंत सूचना प्राप्त करने वाले उपकरण उपलब्ध कराने संबंधी कार्यक्रम है। यह विदेशों में चलाए जा रहे 'फ्यूचर सोल्जर' जैसे कार्यक्रमों का ही भारतीय रूप है जिसका उद्देश्य सैनिकों को अधिक घातक शस्त्रों से लैस करना, उन्हें पहले से कहीं अधिक सुरक्षा प्रदान करना और युद्ध में और भी गतिशीलता प्रदान करना है। इसका पहला चरण जल्दी ही पूरा किए जाने की योजना है जिसके अंतर्गत पैदल सेना के सिपाहियों को बहुपयोगी मॉड्यूलर वेपन सिस्टम से लैस किया जाएगा। इसके अलावा सैनिकों द्वारा उठाए जाने वाले भार में भी 50 प्रतिशत तक कमी लाने के प्रयास किए जा रहे हैं। भारतीय सुरक्षा वैज्ञानिकों का इरादा 2020 तक इस कार्यक्रम के अंतर्गत संपूर्ण 465 इंफैंट्री और पैरामिलिट्री बटालियनों को आधुनिक रूप देने का है। इसका विस्तृत रूप कुछ इस प्रकार होगाः

हेल्मेट और वाइजरः हेल्मेट एक थर्मल सेंसर, वीडियो कैमरा, रासायनिक और जैविक सेंसर युक्त समाकलित युक्ति होगी। इसी प्रकार वाइजर या मुखावरण भी एक समाकलित युक्ति होगी जो हेड्स-अप डिस्प्ले मॉनीटर की तरह काम करेगी और यह 17 इंच कंप्यूटर मानीटर्स के समतुल्य होगी।

क्लोदिंग या यूनीफॉर्मः भविष्य में सिपाही की वर्दी बुलेटप्रूफ जैकेट सहित और बहुत कम भार वाली होगी। भविष्य में जैकेट हल्की होने के अलावा सांस लेने में सुगम और जलरोधी भी होगी। ये नवीन परिधान उन्हें अतिरिक्त सामान ले जाने में सक्षम बनाएंगे और इन पर रासायनिक युद्धास्त्रों का प्रभाव भी नहीं होगा। वर्दी में लगे सैंसर न केवल सैनिकों के स्वास्थ्य को मॉनीटर करेंगे बल्कि तुरंत चिकित्सा भी उपलब्ध कराएंगे।

युद्धास्त्रः हथियारों की इस खेप में 5.56 एमएम, एक 7.62 एमएम की राइफल के साथ भारत में पहली बार निर्मित की जा रही नवीन 6.8 एमएम राइफल शामिल होगी। अंडर बैरल ग्रेनेड लांचर हवा में मार करने में सक्षम होगी। दूरी और दिशा बताने के लिए थर्मल वैपन भी इसमें शामिल होगा। ग्लोबल पोजीशनिंग सिस्टम से प्राप्त सूचना के आधार पर सैनिक सही वार करने में सक्षम होगा। इजराइल की सहायता से बनाई जा रही दो प्रकार की अगली पीढ़ी की इंफैंट्री राइफलें विकास की अवस्था में हैं।

कुछ अन्य उपकरणः सिपाही को एक ऐसा पामटॉप उपलब्ध कराए जाने की योजना है जिसकी सहायता से वह अन्य सिपाहियों से संपर्क कर सकेगा और उसे युद्ध क्षेत्र की वास्तविक स्थिति का ज्ञान होगा। इसके जरिए संदेशों का आदान प्रदान भी संभव होगा।

भविष्य में सिपाही अपने आप में एक पूरा सिस्टम होगा, जहाँ उसे निर्णय भी स्वयं लेना होगा, लेकिन उसे कमांडर, कंट्रोलर, प्लानर और एक्जीक्यूटर से निरन्तर सम्पर्क भी बनाये रखना होगा। आधुनिक युद्ध के सम्पूर्ण नेटवर्क में वह एक टर्मिनल के समान होगा। मुकाबले को और भी प्रभावी बनाने के लिए इस सैनिक से जुड़े इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों में ग्लोबल पोजीशनिंग सिस्टम (जी.पी.एस.) और हाथ में स्टैंड एलोन लैपटॉप भी शामिल होगा। यह तो सच है कि सैनिकों के साज-सामान पर होने वाले खर्च में काफी बढ़ोतरी हुई वहीं दूसरी ओर इसका संतोषजनक पहलू यह भी है कि इससे सैनिकों की मृत्यु दर में भी कमी आई है। यही कारण है सभी बड़े बड़े देश भविष्य में ऐसी सैन्य प्रणालियां विकसित करने में लगे हैं जिससे हर सैनिक अपने आप में एक चलता फिरता सैन्य बल होगा। जिससे उसकी मारक क्षमता बढ़ेगी और वह अपनी सुरक्षा भी कर सकेगा।

जासूसी उपग्रह

16 मार्च, 1955 को पहली बार अमरीकी वायुसेना ने अधिकारिक रूप से एक ऐसा उपग्रह बनाने का आदेश दिया था जो अन्तरिक्ष में रहकर पड़ोसी देशों की सैनिक गतिविधियों पर नजभर रख सके। अक्टूबर 1957 में, रूस ने अपना पहला उपग्रह स्पुतनिक प्रक्षेपित किया था। जब से मनुष्य ने अन्तरिक्ष में अपने उपग्रह स्थापित किये हैं, अन्तरिक्ष भी एक युद्ध-क्षेत्र बन चुका है। अन्तरिक्ष की निम्न कक्षा में स्थापित विशेष प्रकार के उपग्रह जासूसी के कार्य में भी सहायता करने लगे हैं। ये उपग्रह शत्रु की सेना की सभी चालों की भली-भाँति चौकसी कर लेते हैं। उच्च टेक्नॉलॉजी की यह तकनीक भविष्य के युद्धों में भी महत्वपूर्ण रहेगी। अब तो भारत ने भी अन्तरिक्ष में अपना जासूसी उपग्रह स्थापित कर दिया है जो मौसम पर नजर रखने के साथ-साथ सीमा की भी चौकसी करेगा। रीसैट नामक यह उपग्रह प्राकृतिक आपदाओं की मैपिंग और प्रबन्धन के साथ-साथ राष्ट्र की सुरक्षा के लिए सीमाओं की निगरानी को भी बढ़ाएगा। इसरो ने 20 अप्रैल 2009 को सुबह पौने सात बजे आंध्र प्रदेश के श्रीहरिकोटा अंतरिक्ष केन्द्र से देश के पहले जासूसी उपग्रह रडार इमेजिंग सैटेलाइट (रीसैट) का सफल प्रक्षेपण किया। इज़राइल एयरोस्पेस इंडस्ट्रीज की मदद से बनाए बए इस उपग्रह से सुरक्षा एजेंसियों को देश की सीमाओं पर निगरानी करने में मदद मिलेगी।

तीन सौ किलोग्राम भार का यह रडार इमेजिंग सैटेलाइट भारत के स्वदेशी रॉकेट 'पोलर सैटेलाइट लांच वेहिकिल' (पीएसएलवी) के जरिए अंतरिक्ष में भेजा गया। हर स्थिति में काम करने में सक्षम इस रिमोट सेंसिंग एडवांस्ड इमेजिंग सैटेलाइट को पृथ्वी से लगभग 550 किमी. ऊपर स्थापित किया गया है। उपग्रह में लगे सिंथेटिक एपर्चर रडार (एसएआर) पेलोड में दिन, रात और हर तरह के मौसम, यहां तक कि घने बादलों के बीच भी तस्वीर उतारने की क्षमता है।

रीसैट-2 देश की सीमा पर निगाह रखने के साथ-साथ घुसपैठ व आतंकवाद निरोधक कार्यक्रमों के लिए भी मददगार साबित होगा। रीसैट का इस्तेमाल मानचित्र बनाने, प्राकृतिक आपदाओं पर नज़र रखने एवं समुद्रों के सर्वे में भी किया जायेगा। रीसैट बाढ़ व भूस्खलन जैसी प्राकृतिक आपदाओं के बारे में भी जानकारी देने में सक्षम है। रीसैट-2, जंगलों में बने कैंपों पर भी नज़र रखेगा। रीसैट-2 का जीवनकाल तीन वर्ष का है। उल्लेखनीय है कि अभी तक किसी भी भारतीय उपग्रह में यह खूबी नहीं है कि वह किसी भी मौसम एवं घने बादलों में भी देश की सीमाओं पर चौबीसों घंटे घुसपैठ और आतंकवाद निरोधी अभियानों पर नज़र रख सके।

विश्व के अधिकतर देश भविष्य में अपनी सैन्य क्षमताओं को बढ़ाने के लिए बहुत कुछ कर रहे हैं लेकिन आतंकवादी हमलों से यह भी सामने आ रहा है कि उनकी क्षमताओं को भी कम करके आँकना, बहुत बड़ी भूल सिद्ध होगी। अब समय आ गया है जब सैन्य बलों के साथ-साथ पुलिस बलों और आतंकविरोधी-दस्तों को भी आधुनिक हथियारों से लैस करना जरूरी है क्योंकि युद्ध अब केवल युद्ध क्षेत्र तक ही सीमित नहीं है बल्कि यह हमारे द्वार पर दस्तक दे रहा है।

vineeta_niscom@yahoo.com

❑❑❑

मृत सागर
जहां डूबना असंभव

राजदीप

जल ही जीवन है, जिस तरह मानव शरीर का सत्तर प्रतिशत भाग जल से निर्मित है, उसी तरह पृथ्वी के क्षेत्रफल का भी लगभग सत्तर प्रतिशत (अर्थात 36.1 करोड़ कि.मी.) जल तथा तीस प्रतिशत भूभाग है। पृथ्वी पर उपस्थित लगभग 98 प्रतिशत जल (खारा पानी) महासागरों में तथा केवल दो से ढाई प्रतिशत (पीने योग्य) जल झीलो, नदियों तथा भूमिगत स्रोतों से है। जल के ये अथाह भंडार– 'महासागर' प्रकृति की एक अमूल्य धरोहर हैं। प्रशान्त महासागर, अन्ध महासागर, उत्तरध्रुवीय महासागर, हिन्द महासागर, दक्षिण ध्रुवीय महासागर इनमें प्रमुख हैं। ये महासागर सात महाद्वीपों को आपस में जोड़ते हैं। महासागरों की प्रकृति, क्षेत्रफल और गहराईयां अलग-अलग हैं। 2010 में यूनाइटेड स्टेट्स सेंटर फॉर कोस्टल एंड ओसियन मैपिंग के नाप के अनुसार महासागर की अधिकतम गहराई 10,994 मीटर तथा औसतन 3700 मीटर है। यू.एस. जियोलाजिकल सर्वे के अनुसार महासागरों में कुल जल 1,386,000,000 क्यूबिक किलोमीटर (km^3) है।

जहाँ शांत नीला पानी आपको अपनी ओर आकर्षित करता है वहीं गहरा तथा तेज बहाववदार पानी भय और खौफ पैदा करता है। यदि आपको तैरते नहीं आता है तो इससे दूर रहने की सलाह दी जाती है। परन्तु मृत सागर दुनिया का ऐसा समुद्र है जहाँ दुर्घटना या डूबने के बारे में कोई चेतावनी लगी नहीं मिलेगी। तैरना न आने पर भी आप बिना किसी डर के इस समुद्र में कितनी भी दूर तथा गहराई में जा सकते हैं, इस समुद्र में कोई नहीं डूबता है। मृत सागर धरती का एक ऐसा आश्चर्य है जिसमें डूबना असंभव है। पानी का अधिक घनत्व होने के कारण इसमें डूबना असंभव है। लगभग साठ-पैंसठ किलोमीटर लंबा और अठारह-बीस किलोमीटर चौड़ा मृत सागर अपने अत्यधिक घनत्व और खारापन के लिए दुनियाभर में मशहूर है। समुद्र तल से 1400 फुट नीचे दुनिया का सबसे निचला बिन्दु पर स्थित यह सागर अन्य किसी भी महासागर के पानी के मुकाबले 35-40 प्रतिशत ज्यादा खारा है। यहाँ बिना लाइफ सपोर्ट जैकेट के आप पानी में उतरते ही तैरने लगते हैं जैसे पानी में कोई हल्की चीज तैरती है। मृत सागर अपने अद्भुत गुणों के कारण चौथी सदी से जाना जा रहा है। मिश्र की महारानी क्लियोपेट्रा की खूबसूरती के राज से भी जोड़ा जाता है। ऐसा कहा जाता है कि इसकी तटीय काली मिट्टी के लेप का इस्तेमाल महारानी क्लियोपेट्रा अपनी खूबसूरती बढ़ाने में किया करती थीं। चौथी सदी में मृत सागर की तह से शिलाजीत निकाला जाता था और मिस्र लेकर बेचा जाता था। इसका उपयोग वस्तुओं तथा समान को खराब होने से बचाने, उन्हें सुगंधित बनाने में किया जाता था।

महारानी क्लियोपेट्रा

मृत सागर के कीचड़ (मड) जो कई तरह के खनिज, मिनरल, लवणों से युक्त होता है को शरीर पर लेप लगाने से त्वचा संबंधित रोग खासकर सोराइसिस, एग्जिमा तथा चर्म रोग जैसी बीमारियाँ तथा कई लाइलाज रोगों को इसके जल से दूर किया जाता है। पोटाश, ब्रोमाइड, मैग्नीशियम, कैल्शियम, जिंक, सल्फर जैसे खनिज लवण भी काफी मात्रा में होने के कारण इसका न तो पानी और न ही इससे बने नमक खान–पीन योग्य है। अपने चिकित्सीय गुणों के कारण एशिया में चिकित्सा पर्यटन का केन्द्र बनता जा रहा है।

पानी की सतह पर तैरते हुये

मृत सागर जॉर्डन और इजराल के बीच तथा येरुसलम (इसराइल की राजधानी) से यह 15 मील दूर पूर्व की ओर स्थित है। पूर्वी तट जॉर्डन तथा दक्षिणी–पश्चिमी तट इजरायल है। अरबी लोगों ने इसका नाम 'अलबाहर अलनायित' अर्थात् मृत सागर रखा तथा इसराइल के लोग इसे 'याम हा मेलाच' अर्थात् 'नमक का सागर' के नाम से पुकारते हैं।

मृत सागर पूर्व में जार्डन के पठारों तथा इजरायल की पश्चिमी पहाड़ियों और जॉर्डन, यहूदिया और यरदन जैसी नदियों से घिरा है। इन नदियों का पानी सागर की आपूर्ति करता है। इस प्रक्रिया में नदियों का पानी पहाड़ों से कई खनिज लवण लाता है। मृत सागर के पानी अत्यधिक वाष्पीकरण होने से इस सागर में नमक की डेंसिटी बढ़ती रहती है। आम जल की तुलना में मृत सागर के जल में बीस गुना ज्यादा ब्रोमीन, पचास गुना ज्यादा मैग्नीशियम और दस गुना ज्यादा आयोडीन पाया जाता है। जहाँ मैग्नीशियम त्वचा संबंधी रोग दाद, खुजली, एलर्जी तथा श्वास नली संबंधी समस्या को ठीक करता है वहीं आयोडीन कई ग्रंथियों को ठीक करने के साथ उनकी सक्रियता को बढ़ता है, तथा ब्रोमीन धमनियों को शांत करता है। अन्य खनिज भी प्रचूर मात्रा में मिलते हैं। मृत सागर के कीचड़ (मड) जो कई तरह के खनिज, मिनरल, लवणों से युक्त होता है का शरीर पर लेप लगाने से त्वचा संबंधित रोग खासकर सोराइसिस, एग्जिमा तथा चर्म रोग जैसी बीमारियाँ से छुटकारा पाया जा सकता है। कई लाइलाज रोगों को इसके पानी से दूर किया जाता है। पोटाश, ब्रोमाइड, मैग्नीशियम, कैल्शियम, जिंक, सल्फर जैसे खनिज लवण भी काफी मात्रा में होने के कारण इसका न तो पानी और न ही इससे बने नमक खान–पीन योग्य है। लेकिन मृत सागर का पानी अपने चिकित्सीय गुणों के कारण एशिया में चिकित्सा पर्यटन का केन्द्र बनता जा रहा है।

अन्य समुद्रों में जहाँ नमक की मात्रा चार से पांच प्रतिशत पायी जाती है वहीं मृत सागर के पानी में यह मात्रा सर्वाधिक तीस–चालिस प्रतिशत के लगभग है। अन्य सागरों की तुलना में सात से आठ गुना ज्यादा खारा है। फलस्वरूप इस पानी में कोई भी जलीय जीव या जलीय वनस्पति जिंदा नहीं रह पाते। यदि गलती से कोई जीव मृत सागर में आ जाता है तो अधिक खारेपन की वजह से तुरंत मर जाता है। कुछ ही बैक्टीरिया और शैवाल ही मिलते हैं। इसमें जीवाणुओं की मात्र 11 जातियां ही पाई जाती हैं। यही कारण है कि इसे मृत सागर का दर्जा दिया गया है। यह नाम प्राचीन ग्रीक लेखक ने दिया था।

समुद्र के पानी में मैग्नीशियम तथा सोडियम औसतन 1 घन फुट के लिए 1 कि.ग्रा होता है पर मृत सागर का पानी अत्यधिक खारा और अधिक घनत्व का होने से इन्सान पानी की सतह पर तैरता रहता है। इसे दुनिया की सबसे गहरी खारे पानी की झील भी कहते हैं।

मृत सागर की तटीय जमीन तथा आस–पास का इलाका रेतीला, बंजर और सूखा है। हरियाली न के बराबर होने से साल भर तेज धूप तथा अधिक गर्मी रहती है। यहाँ की हवा शुष्क है तथा बारिश भी बहुत कम होती है। इसके बाद भी सूर्य की किरणें शरीर को बिलकुल भी नहीं चुभती। अनुमान है कि मृत सागर में करोड़ टन पोटाश है, जो कृत्रिम खाद बनाने में उपयोगी है।

स्वास्थ्य एवं सौन्दर्य प्रसाधन

साँस और त्वचा संबंधी बीमारियों से मुक्ति के लिए मृत सागर मशहूर है। मृत सागर में नहाने से कई बीमारियाँ समाप्त हो जाती है। मृत सागर के पानी और वहाँ के वातावरण में कई रोगनाशक औषधीय विशेषताएं है जिसका शरीर पर खास किस्म का

प्रभाव पड़ता है। वायुमंडल के दबाव, हवा और पानी में घुले मिनरल्स और लवणों के कारण वहाँ इंसान की नाना प्रकार की शारीरिक व्याधियां दूर हो जाती हैं।

हालांकि मृत सागर में कोई जलीय जीव नहीं पनप पाता पर इसका पानी वैद्यकीय गुणों से भरपूर है। इस सागर के पानी तथा इसमें मिलने वाली काली मिट्टी भी दुनिया के ज्यादातर सौन्दर्य प्रसाधनों में इस्तेमाल की जाती है। गर्म सल्फर के सोते तथा तटीय मिट्टी (कीचड़) कई बीमारियों मुख्यतः घुटनों तथा जोड़ों के दर्द (आर्थराइटिस) को दूर करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। औषधीय गुणों से भरपूर होने के कारण त्वचा संबंधी लाइलाज रोगों के लिए भी इस्तेमाल किया जाता है। जल में सोडियम की उपस्थिति कमजोर मांसपेशियां, थकान तथा सिर दर्द को दूर करता है, वही आयोडीन गले से संबंधित कई तरह की बीमारियों से निजात दिलाता है। ब्रोमीन धमनियों की गति को नियंत्रित करता है और मैग्नीशियम की उपस्थिति शरीर में त्वचा संबंधित त्वचा रोग, एक्जीमा, सोराइसिस की परेशानियों छुटकारा दिलाता है। कई अंतर्राष्ट्रीय कंपनियाँ मृत सागर से ली गईं चीज़ों पर आधारित सौन्दर्य प्रसाधन की सामग्री बनाती हैं। वैज्ञानिकों ने भी माना कि इस पानी से मिलने वाले खनिज लवण, मिनरल्स हमारे लिए बहुउपयोगी हो सकते हैं। आज मृत सागर एशिया के चिकित्सा पर्यटन केन्द्रों के रूप में आकर्षण का केन्द्र बनता जा रहा है।

पर्यटन

मृत सागर सदा से ही विदेशी सैलानियों के लिए कौतुहल का विषय बना हुआ है। मृत सागर की इस लोकप्रियता के चलते इसे वर्ष 2007 में दुनिया के सात अजूबों में शामिल किया गया था। लेकिन इसके पक्ष में कम मत (वोट) मिलने के कारण ये दुनिया के सात अजूबों में शामिल नहीं हो सका।

मृत सागर के पानी का उपयोग चीजों को खराब होने से बचाने तथा इनको महकदार बनाने में किया जाता है। इसके तटीय इलाकों को रिसोर्ट के रूप में विकसित किया गया है जहाँ क्लीनिक, होटल, स्पा, मसाज सेंटर, सैरगाह तथा पर्यटन स्थल खुल गये हैं जिससे हर समय सैलानियों की भीड़ लगी रहती है। नमक और लवणों के छोटे-छोटे खूबसूरत पहाड़, टीले और किनारों पर फैला नमक जो दूर से समुद्री झाग की तरह लगते हैं विशेष आकर्षण का बिन्दु होता है। मृत सागर के तटीय इलाकों में पर्यटन और स्वास्थ्य केन्द्र खोले गए हैं जहाँ तटीय काली मिट्टी और नमक से विभिन्न स्पा और मड-थेरेपी के जरिये इलाज किया जाता है। अपनी व्यस्ततम जिन्दगी के चलते सैलानी यहाँ आकर घंटों पानी में डुबकियाँ लगाकर, तैराकी कर जल क्रीड़ाओं के साथ अपनी छुट्टियों का मजा उठाते हैं। किनारों पर आकर लोग इसका काला कीचड़ अपने शरीर व चेहरे पर मलते हैं। यह कीचड़ त्वचा को निखारने के साथ-साथ त्वचा संबंधित कई बीमारियों को समाप्त करने का भी गुण रखता है।

हालांकि मृत सागर में जार्डन नदी तथा छोटी-छोटी अन्य नदियाँ, नालों से पानी आता रहता है लेकिन दुनिया के सबसे निचली सतह पर स्थित होने के कारण इस सागर का पानी बाहर नहीं निकल पाता। साल भर शुष्क हवा और अधिक तापमान होने के कारण वाष्पीकरण अधिक होता है। नदियों द्वारा बहाकर लाये गये लवण और अघुलनशील खनिजों की मात्रा अधिक होने के कारण इसका खारापन बढ़ता जा रहा है। ऐसा अनुमान है कि हर साल यह सागर अपनी सतह 1 मीटर से अधिक नीचे होता जा रहा है और आने वाले समय में मृत सागर की समुद्र तल से निचाई चार सौ मीटर से बढ़कर छ-सात सौ मीटर हो जायेगी जिससे यह सागर एक झील का रूप ले लेगा।

tomar.rj21@gmail.com

❑❑❑

मृत सागर में कोई जलीय जीव नहीं पनप पाता पर इसका जल वैद्यकीय गुणों से भरपूर है। इस सागर के पानी तथा इसमें मिलने वाली काली मिट्टी भी दुनिया के ज्यादातर सौन्दर्य प्रसाधनों में इस्तेमाल की जाती है। गर्म सल्फर के सोते तथा तटीय मिट्टी (कीचड़) कई बीमारियों मुख्यतः घुटनों तथा जोड़ों के दर्द (आर्थराइटिस) को दूर करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। औषधीय गुणों से भरपूर होने के कारण त्वचा संबंधी लाइलाज रोगों के लिए भी इस्तेमाल किया जाता है।

तटीय काली मिट्टी (कीचड़) का लेप लगाए हुए

31 उपग्रहों का सफल प्रमोचन

कालीशंकर

12 जनवरी 2018 को भारतीय अन्तरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) ने अपना सौवाँ उपग्रह कार्टोसैट-2 एफ सफलता पूर्वक प्रमोचित करके अन्तरिक्ष विज्ञान की ऊँचाईयों को पुनः छू लिया है। इसरो ने अपने प्रमोचन केन्द ‘सतीश धवन’ उपग्रह केन्द्र, से कार्टोसैट-2 एफ उपग्रह के साथ 30 अन्य उपग्रहों का प्रमोचन किया। इन तीस अन्य उपग्रहों में भारत का एक 10 कि.ग्रा. का नैनो उपग्रह तथा एक 100 किग्रा. का माइक्रो उपग्रह शामिल है। 28 उपग्रहों में शामिल हैं-कनाडा, फिनलैंड, फ्रान्स, कोरिया, ब्रिटेन और अमरीका के उपग्रह। इसरो और एंट्रिक्स कार्पोरेशन लिमिटेड के बीच हुए व्यापारिक समझौतो के अन्तर्गत इन 28 अंतर्राष्ट्रीय उपग्रहों का प्रमोचन किया गया। 28 अन्तर्राष्ट्रीय उपग्रहों में 19 उपग्रह अमरीका के हैं, 5 दक्षिण कोरिया के तथा एक एक उपग्रह कनाडा फ्रान्स, ब्रिटेन और फिनलैन्ड के हैं। सभी 31 उपग्रहों का कुल भार 1323 कि.ग्रा. है। यह वर्ष 2018 का इसरो का पहल प्रमोचन था। 31 अगस्त 2017 को इसी प्रकार के पीएसएलवी प्रमोचन यान से नेविगेशन उपग्रह आई आर एन एस एस-1 एच प्रमोचित किया गया था लेकिन हीट शील्ड न खुलने के कारण यह उपग्रह राकेट के चौथे चरण में असफल हो गया था।

पीएसएलवी-सी 40 के सफल प्रमोचन पर प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने इसरो को बधाई दी। अपने ट्विटर के माध्यम से उन्होंने कहा कि देश के भावी अन्तरिक्ष कार्यक्रम के लिए यह इस अंतरिक्ष संस्था की उपलब्धियों को दर्शाता है। उन्होंने कहा, “इसरो और इसके वैज्ञानिकों को आज पीएसएलवी के सफल प्रमोचन पर मेरी शुभकामनाएँ। यह नव वर्ष की सफलता हमारे नागरिकों किसानों और मछुआरों के लिए अंतरिक्ष तकनीकों के लाभों को उन तक पहुँचायेगी।” राष्ट्रपति रामनाथ कोविन्द ने इस मिशन की सफलता के लिए इसरो को बधाई दी और कहा कि प्रत्येक भारतीय के लिए यह एक गर्व का क्षण है। उन्होंने यह भी कहा कि देश के लिए यह एक माइल स्टोन है। कॉंग्रेस अध्यक्ष ने इसरो को अपने बधाई सन्देश में कहा कि अन्तरिक्ष संस्था ने एक बार फिर इतिहास का सृजन किया है। उन्होंने ट्वीट सन्देश में कहा, “आपकी कड़ी मेहनत और समर्पण कार्य निष्ठा ने भारत को अन्तरिक्ष कार्यक्रम में एक कर्णधार बना दिया है।”

प्रमोचन के बाद सेवा निवृत्त हो रहे इसरो चेयर मैन ए.एस. किरन कुमार ने कहा कि सब घटना क्रम पूर्व निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार चला तथा टीम ने 31 उपग्रहों को कक्षा में पहुँचा दिया। उन्होने यह भी कहा, “पीएसएलवी प्रमोचन राकेट की बहु उपग्रहों को कक्षा में स्थापित करने तथा उपग्रहों को बहु कक्षाओं में स्थापन की क्षमता का प्रदर्शन

प्रायोगिक रूप से एक मिशन के द्वारा प्रदर्शित हो गया है। पी एस एल वी की क्षमताएँ महान है।''

31 उपग्रहों के साथ पीएसएलवी–सी 40 राकेट उड़ान के लिए तैयार

मिशन में प्रमोचित उपग्रहों का विवरण

इस मिशन के द्वारा कुल 31 उपग्रहों का प्रमोचन किया गया जिसमें 3 उपग्रह भारत के तथा 28 उपग्रह विश्व के 6 देशों – कनाडा, फिनलैन्ड, फ्रान्स, कोरिया गणराज्य, ब्रिटेन और अमरीका के थे। मिशन का प्रायमरी उपग्रह भारत का कार्टोसैट–2 एफ भू प्रेक्षण उपग्रह था। 28 अन्तर्राष्ट्रीय उपग्रहों का प्रमोचन अन्तरिक्ष विभाग की वाणिज्यिक शाखा–ऐन्ट्रिक्स (अन्तरिक्ष कार्पोरेशन लिमिटेड) और अन्तर्राष्ट्रीय उपभोक्ता देशों के बीच हुए एक समझौते के अन्तर्गत किया गया था। अब इन उपग्रहों का यहाँ वर्णन किया जायेगा।

भारतीय उपग्रहः भारत के तीन उपग्रहों में एक भू प्रेक्षण उपग्रह कार्टोसैट–2ए, एक माइक्रो एवं एक नैनो उपग्रह आइ एन एस–1 सी था।

- कार्टोसैट–2 एफ : यह उपग्रह पीएसएलवी–सी 40 मिशन का प्रायमरी उपग्रह है जो एक सुदूर संवेदन उपग्रह है तथा यह कार्टोसेट–2 शृंखला के पूर्व प्रमोचित उपग्रहों से मिलता जुलता है। यह उपभोक्ताओं को डाटा सेवा प्रदान करेगा। इस उपग्रह के द्वारा भेजी गई प्रतिविम्बिकी विभिन्न कार्टोग्रैफिक उपयोगों में प्रयुक्त होगी जिनमें शामिल हैं। शहरी और ग्रामीण उपयोग, समुद्र तटवर्ती भू उपयोग और रिगुलेशन, उपयोगिता प्रबन्धन जैसे रोड नेटवर्क मॉनीटरन, जल वितरण, भू–उपयोगी मानचित्रण, मानवीय और भौगोलिक परिवर्तनों का संसूचन एवं अन्य विभिन्न प्रकार के भू–सूचना तंत्र (एलआईएस) एवं भौगोलिक सूचना तंत्र (जीआईएस) में उपयोग। इस उपग्रह का भार 710 कि.ग्रा. है तथा इसे 505 कि.मी. दूरी वाली एवं 97.47 डिग्री झुकाव वाली वृत्तीय ध्रुवीय सूर्य समकालिक कक्षा में स्थापित किया गया है। यह उपग्रह 94.72 मि. में पृथ्वी का एक चक्कर लगाता है तथा दिन में एक बार सुबह 9:30 बजे पृथ्वी की भूमध्य रेखा को क्रास करता है। इसमें 986 वाट विद्युत ऊर्जा जनन के लिए सौर पतवारें लगी हैं तथा दो लीथियम आयन बैटरी हैं। उपग्रह का अभिवृत्ति नियंत्रण प्रतिक्रिया चक्रों, चुम्बकीय टार्करों एवं हाइड्राजीन प्रणोदकों के द्वारा किया जाता है। उपग्रह का जीवन काल 5 वर्ष है।
- माइक्रो उपग्रह : इसरो के माइक्रो उपग्रह का भार 100 कि.ग्रा. है तथा इसकी संरचना आई एम एस–1 बस पर आधारित है। यह एक तकनीकी प्रदर्शक भावी उपग्रह शृंखला का उज्ज्वल भविष्य है। इस उपग्रह की बस डिजाइन माडुलर तकनीकी पर आधारित है तथा इसका फैब्रीकेशन और जाँच बिना नीत भार के किया जा सकता है।
- नैनो उपग्रह –1 सी : भारतीय नैनो उपग्रह पीएसएलवी–सी40 मिशन का एक अन्य भारतीय नीतभार है। भारतीय नैनो उपग्रह शृंखला का यह तीसरा उपग्रह है। इस 'आई एन एस–1सी' उपग्रह में अंतरिक्ष उपयोग केन्द्र अहमदाबाद का एक सूक्ष्म बहुस्पेक्ट्रमी तकनीकी प्रदर्शक नीतभार लगा है। इस कैमरे के द्वारा भेजा गया डाटा ट्रोपोग्रैफिक मानचित्रण, वनस्पति मॉनीटरन, एरोसोल बिखराव अध्ययन और बादलों के अध्ययन में उपयोग किया जायेगा। भावी विज्ञान और प्रायोगिक नीतभारों के लिए यह (आईएनएस) एक महत्वपूर्ण माडुलर नैनो उपग्रह बस तंत्र है। इसमें 3 कि.ग्रा. तक नीत भार ले जाने की क्षमता है तथा उपग्रह का कुल भार 11 कि.ग्रा. है। भावी उपयोग के लिए इसमें महान अवसर छिपे हुए हैं। इसके डिजाइन का प्रमुख उद्देश्य पीएसएलवी अभियानो में बड़े उपग्रहों को ले जाना है। यह माँग आधारित सेवाओं के लिए मानक उपग्रह बस प्रदान करती है। इस उपग्रह के विभिन्न तकनीकी गणक सारणी–1 में दिये गये हैं।

नैनो उपग्रह –1 सी भारतीय नैनो उपग्रह पीएसएलवी–सी40 मिशन का एक अन्य भारतीय नीतभार है। भारतीय नैनो उपग्रह शृंखला का यह तीसरा उपग्रह है। इस 'आई एन एस–1 सी' उपग्रह में अंतरिक्ष उपयोग केन्द्र अहमदाबाद का एक सूक्ष्म बहुस्पेक्ट्रमी तकनीकी प्रदर्शक नीतभार लगा है। इस कैमरे के द्वारा भेजा गया डाटा ट्रोपोग्रैफिक मानचित्रण, वनस्पति मानीटरन, एरोसोल विखराव अध्ययन और बादलों के अध्ययन में उपयोग किया जायेगा।

प्रमोचन का एक और दृश्य

इस मिशन में सबसे अधिक अमरीका के उपग्रह हैं जिनकी संख्या 19 है। चार उपग्रहों के नाम 'फ्लाक-3पी' है जो भू प्रेक्षण के लिए हैं। अन्य चार उपग्रहों के नाम 'लेमूर' है जिनका प्रयोग जलपोत मॉनीटरन में स्वचालित पहचान तंत्र के रूप में किया जायेगा। चार अन्य उपग्रहों के नाम 'स्पेस बी' हैं जो दो तरफा उपग्रह संचार और डाटा रिले सेवाएँ प्रदान करेंगे।

कार्टोसैट-2 एफ उपग्रह की जाँच हो रही है।

सारणी-1
नैनो उपग्रह आईएनएस-1 सी के तकनीकी गणक

❑ भारत	:	11 कि.ग्रा.
❑ सम्पूर्ण	:	245×227×217 मि.मी.[3]
❑ ढाँचा	:	माइल्ड एल्युमीनियम डेक
❑ तापीय नियंत्रण	:	पैसिव एवं बैटरी हीटर
❑ पावर	:	सौर पैनेल जो 27 वाट विद्युत ऊर्जा जनित करते है तथा 11.2 एम्पीयर आवर की लीथियम आयन बैटरी
❑ अभियांत्रिकी	:	सौर पैनेल एवं एन्टेना प्रस्तरण
❑ अभिवृत्ति नियंत्रण	:	अभिवृत्ति संवेदक, ऐक्चुएटर टार्कर
❑ नियंत्रण परिशुद्धता	:	<0.5 (दो अक्ष रेखाओं में)
❑ दूरमिति एवं दूरादेश	:	यूएचएफएवं एस-बैन्ड (दूरमिति), वी एच एफ (दूरादेश)

28 विदेशी उपग्रहों का विवरण

इन उपग्रहों में एक उपग्रह कनाडा का है जिसका नाम 'टेलीसैट फेज़-लियो' है जो एक का-बैन्ड संचार उपग्रह है। फिनलैन्ड के उपग्रह का नाम 'पी ओ सी-1' है जो खोज एवं बचाव नीतभार की संकल्पना को सिद्ध करने के लिए भेजा गया है। फ्रान्स के उपग्रह का नाम है 'पिकसैट' जो अन्तराग्रहीय ट्रान्जिट के मापन के लिए भेजा गया है।

कोरिया गणराज्य के 5 उपग्रह है। इनमें प्रथम उपग्रह 'कान्यवल-एक्स' है जो वर्चुअल दूरबीन के द्वारा खगोलिकी के उपयोगों और मापनों का प्रदर्शन करेगा। 'सीएनयू सेल-1' दूसरा उपग्रह है जो सौर पतवार तकनीकी का प्रदर्शन करेगा। तीसरा उपग्रह 'काऊसैट-5' पृथ्वी का इन्फ्रारेड आवृत्ति में प्रतिबिम्बन करेगा। चौथे उपग्रह 'सिग्मा' के द्वारा अन्तरिक्ष विकिरण के विषय में जानकारी ली जायेगी। इस देश का पाँचवाँ उपग्रह 'स्टेपक्यूब लैब' प्रणोदक, विकिरक और हीट पाइप तकनीकों का प्रदर्शन करेगा। ब्रिटेन का एक मात्र उपग्रह 'सीबीएनटी-2' है जो भू प्रेक्षण तकनीक का प्रदर्शन करेगा।

इस मिशन में सबसे अधिक अमरीका के उपग्रह हैं जिनकी संख्या 19 है। चार उपग्रहों के नाम 'फ्लाक-3पी' है जो भू प्रेक्षण के लिए हैं। अन्य चार उपग्रहों के नाम 'लेमूर' है जिनका प्रयोग जलपोत मॉनीटरन में स्वचालित पहचान तंत्र के रूप में किया जायेगा। चार अन्य उपग्रहों के नाम 'स्पेस बी' हैं जो दो तरफा उपग्रह संचार और डाटा रिले सेवाएँ प्रदान करेंगे। अमरीका के बाकी उपग्रह एक एक की संख्या में हैं। 'डेमोसैट-2' उपग्रह अल्ट्रा उच्च आवृत्ति में रेडियो टेस्टिंग के लिए है। 'माइक्रोमास-2' उपग्रह माइक्रोवेव रेडियो मीटर की जाँच करेगा। 'ट्यवाक-61सी' उपग्रह चमकीले तारों का कैटालाग बनाने में मदद करेगा। 'फाक्स-1डी' उपग्रह अमैचर रेडियो संचार के लिए है। 'कोर्वस बीसी 3' उपग्रह का उद्देश्य बहु-स्पेक्ट्रमी सुदूर संवेदन प्रक्रिया है। 'आर्क्यड-6' उपग्रह का उपयोग क्षुद्र ग्रह अन्वेषण के लिए उपयुक्त कोर तकनीकी के प्रदर्शन के लिए किया जायेगा। 'सिसेरो-7' उपग्रह ग्लोबल मौसम पैटर्न का मापन उच्च परिशुद्धता के साथ करेगा।

पीएसएलवी-सी40 उड़ान

31 उपग्रहों के प्रमोचन में प्रयुक्त पीएसएलवी राकेट की यह 42वीं उड़ान पीएसएलवी-सी 40 थी जिसके द्वारा 710 कि.ग्रा. का कार्टोसेट-2 एफ तथा 613 कि.ग्रा. भार वाले 30 सहयात्री उपग्रहों का प्रमोचन किया गया। 31 उपग्रहों में से 30 उपग्रहों को 505 कि.मी. वाली ध्रुवीय सूर्य समालिक कक्षा (एसएसओ) में स्थापित किया गया जब कि

भारत के माइक्रोसैट उपग्रह को 359 कि.मी. वाली ध्रुवीय सूर्य समकालिक कक्षा में स्थापित किया गया। एक मिशन में उपग्रहों को दो भिन्न कक्षाओं में स्थापित करने के लिए पी एस एल वी की चौथी स्टेज को दो बार पुनः प्रज्ज्वलित किया गया जिससे ऊँचाई को बढ़ाया घटाया जा सके। इस मिशन का प्रमोचन इसरो सतीश धवन अन्तरिक्ष केन्द्र के प्रथम प्रमोचन पैड से किया गया। पीएसएलवी-सी 40 मिशन का उत्थापन भार 320 टन था तथा ऊँचाई 44.4 मीटर थी। इस मिशन में पीएसएलवी प्रमोचन राकेट के एक्स एल स्वरूप का प्रयोग किया गया।

इसरो का माइक्रोसैट उपग्रह

मिशन में चार स्टेजों का प्रयोग किया गया था जिसमें प्रथम स्टेज कोर स्टेज के साथ 6 स्ट्रेप ऑन मोटर थे तथा बाकी स्टेजों के नाम थे- पीएस 2, पीएस 3 और पीएस 4। प्रथम स्टेज में ठोस, द्वितीय में द्रव, तृतीय में ठोस तथा चौथी स्टेज में द्रव ईंधन का प्रयोग किया गया। पहली स्टेज की कोर में 138.2 टन तथा 6 स्ट्रैप आन मोटरों में 6×12.2 टन ईंधन भरा गया। प्रथम स्टेज की कोर का व्यास 2.8 मीटर, स्ट्रैप आन का व्यास 1 मीटर, दूसरी स्टेज का व्यास 2.8 मीटर, तीसरी का 2 मीटर तथा चौथी स्टेज का व्यास 1.34 मीटर था।

जहाँ तक स्टेजों की लम्बाई का प्रश्न है, प्रथम स्टेज की कोर की लम्बाई 20 मीटर तथा स्टैप आन की लम्बाई 12 मीटर थी। दूसरी, तीसरी और चौथी स्टेज की लम्बाई क्रमशः 12.8 मीटर, 3.6 मीटर एवं 3 मीटर थी।

कार्टोसैट-2 एफ के द्वारा भेजी गई प्रथम फोटो

इसरो के पीएसएलवी-सी 40 मिशन में भेजे गये प्रायमरी उपग्रह कार्टोसैट-2 एफ उपग्रह ने 15 जनवरी 2018 की शाम को पृथ्वी की प्रथम फोटो ली जिसे इसरो ने 17 जनवरी 2018 को जारी किया। इस तस्वीर में मध्य प्रदेश के इंदौर शहर का एक हिस्सा दिख रहा है जिसके केन्द्र में होलकर क्रिकेट स्टेडियम है। इस उपग्रह के प्रक्षेपित किये जाने के तीन दिन बाद 15 जनवरी 2018 को यह तस्वीर ली गई थी और भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) के बेंगलूर स्थित मुख्यालय की वेबसाईट पर यह तस्वीर जारी की गई।

इसरो के पीएसएलवी-सी 40 मिशन में भेजे गये प्रायमरी उपग्रह कार्टोसैट-2 एफ उपग्रह ने 15 जनवरी 2018 की शाम को पृथ्वी की प्रथम फोटो ली जिसे इसरो ने 17 जनवरी 2018 को जारी किया। इस तस्वीर में मध्य प्रदेश के इंदौर शहर का एक हिस्सा दिख रहा है जिसके केन्द्र में होलकर क्रिकेट स्टेडियम है। इस उपग्रह के प्रक्षेपित किये जाने के तीन दिन बाद 15 जनवरी 2018 को यह तस्वीर ली गई थी

पीएसएलवी - सी 40 मिशन की कुछ विशिष्ट बातें

- प्रमोचित 31 उपग्रहों में 3 उपग्रह भारत के हैं तथा बाकी विश्व के 6 देशों से हैं।
- यह वर्ष 2018 का प्रथम इसरो मिशन था।
- इस मिशन में उपग्रह दो विभिन्न कक्षाओं में स्थापित किये गये जो एक विशिष्ट बात थी।

उपग्रहों को अन्तरिक्ष कक्षा में स्थापित करने में 2 घं. 21 मि. का समय लगा जो अब तक का सबसे लम्बा समय था। भारत का माइक्रोसैट उपग्रह इसरो का 100वाँ उपग्रह था जो अन्तरिक्ष की कक्षा में पहुँचा। इस मिशन में 2 घं. अतिरिक्त समय लगने का कारण यह था कि इसमें बहु-प्रज्ज्वलन तकनीक का प्रयोग किया गया जहाँ पर चौथी स्टेज 3 अतिरिक्त समय तक प्रज्ज्वलित की गई जिससे 30 उपग्रहों को 505 कि.मी. ऊँचाई वाली और एक उपग्रह को 359 कि.मी. ऊँचाई वाली सूर्य समकालिक कक्षा में स्थापित किया जा सका।

ksshukla@hotmail.com

❑❑❑

कार्टोसैट-2 एफ से प्राप्त इन्दौर शहर के होलकर क्रिकेट स्टैडियम का चित्र जो इस उपग्रह से प्राप्त प्रथम चित्र था।

कार्टोसैट

सैन्य निरीक्षण क्षमताओं में इजाफा

शशांक द्विवेदी

आज से लगभग 43 साल पहले उपग्रहों का साइकिल और बैलगाड़ी से शुरू हुआ इसरो का सफर आज उस मक़ाम पर पहुँच गया है जहाँ भारत अंतरिक्ष के क्षेत्र में दुनियाँ के सबसे शक्तिशाली पाँच देशों में से एक बन गया है। अंतरिक्ष के क्षेत्र में एक और छलाँग लगाते हुए इसरो ने अंतरिक्ष में प्रक्षेपण की सेंचुरी लगा दी है। अपनी सैन्य क्षमताओं और निगरानी तंत्र को बेहद मजबूत बनाने के लिए भारत ने आसमान में एक और बड़ी छलांग लगाते हुए आंध्र प्रदेश के श्रीहरिकोटा के सतीश धवन स्पेस सेंटर से पोलर सैटेलाइट लॉन्च व्हीकल (पीएसएलवी -सी 40) की सहायता से कार्टोसैट-2 शृंखला के रिमोट सेंसिंग उपग्रह सहित 31 उपग्रहों को सफलतापूर्वक प्रक्षेपित कर दिया। इसमें एक भारतीय माइक्रो सैटेलाइट और एक नैनो सैटेलाइट के अलावा 28 छोटे विदेशी उपग्रह हैं। यह इसरो का 42वां और साल 2018 का पहला मिशन है। इसके ज़रिए भेजा गया कार्टोसैट सैटेलाइट अपनी कक्षा में पहुंच गया है। ये सैटेलाइट न सिर्फ भारत के सरहदी और पड़ोस के इलाकों पर अपनी पैनी नज़र रखेगा बल्कि स्मार्ट सिटी नेटवर्क की योजनाओं में भी मददगार रहेगा। ये सैटेलाइट 500 किमी से भी ज्यादा ऊंचाई से सरहदों के करीब दुश्मन की सेना के खड़े टैंकों की गिनती कर सकता है। भारत के पास पहले से ऐसे पांच रिमोट सेंसिंग सैटेलाइट मौजूद है। पिछले साल पाकिस्तान के खिलाफ भारतीय सेना द्वारा की गई सर्जिकल स्ट्राइक में दुश्मन ठिकाने की सटीक जानकारी कार्टोसैट उपग्रह से ही मिली थी। अब कार्टोसैट श्रंखला के तीसरे सफल प्रक्षेपण के बाद देश की सैन्य निरीक्षण क्षमता में भारी इजाफा होगा। पीएसएलवी पर कार्टोसैट-2 के अलावा जो उपग्रह गए हैं, उनमें से 28 सैटेलाइट अमेरिका, ब्रिटेन, फ्रांस, कनाडा, फिनलैंड और दक्षिण कोरिया के हैं, जिनमें अकेले अमेरिका के 19 सैटेलाइट हैं। कार्टोसैट 2 सैटेलाइट सीरीज एक निगरानी उपग्रह है जिसकी मदद से अब डिफेंस और कृषि क्षेत्र की तत्का ल जानकारी मिलेगी। इसका इस्तेमाल तटीय क्षेत्रों और शहरों की निगरानी के लिए इस्तेमाल किया जाएगा। कार्टोसैट 2 सैटेलाइट सीरीज में हाईरेजुलेशन कैमरा लगा है जिससे खींची फोटो का इस्तेमाल किया जाएगा। कार्टोसैट-2 शृंखला के इस उपग्रह के प्रक्षेपण के साथ ही भारत की अंतरिक्ष और अधिक पैनी और व्यापक होने जा रही है। हालिया रिमोट सेंसिंग उपग्रह की विभेदन क्षमता 0.6 मीटर की है। इसका अर्थ यह है कि यह छोटी चीजों की तस्वीरें ले सकता है। रिमोट सेंसिंग कार्टोसैट-2 शृंखला के उपग्रह का वजन 710 किलोग्राम है। इसके साथ सह यात्री उपग्रह भी है जिसमें 100 किलोग्राम का माइक्रो और 10 किलोग्राम का भारतीय नैनो उपग्रह भी शामिल हैं, बाकी सभी सह यात्री उपग्रहों का कुल वजन करीब 613 किलोग्राम है ।

कमर्शियल लान्चिंग में इसरो का दबदबा

पीएसएलवी से प्रक्षेपण का खर्च लगभग 100 करोड़ रुपए आता है। पिछले साल ही अंतरिक्ष इतिहास में पहली बार 7 देशों के 104 उपग्रह एक साथ प्रक्षेपित करके इसरों ने इतिहास रच दिया था। ग्लोबल सैटेलाइट मार्केट में भारत की हिस्सेदारी बढ़ रही है। अभी यह इंडस्ट्री लगभग 200 अरब डॉलर की है। फ़िलहाल इसमें अमेरिका की हिस्सेदारी 41% की है। जबकि भारत की हिस्सेदारी अभी कम है लेकिन वो लगातार साल दर साल बढ़ रही है। छोटे उपग्रहों को लॉन्च करने में महारत हासिल कर चुकी इसरो ने अब तक सैटेलाइट लॉन्चिंग के जरिए

631 करोड़ रुपए की कमाई की है। विदेशी सैटेलाइट इतनी कम कीमत में लॉन्च करने के कारण अमेरिका के लिए इसरो सीधा प्रतिद्वंदी बन गया है। विशेषज्ञों के अनुसार इस लॉन्च के सफल होने से दुनिया भर में छोटी सैटेलाइट लॉन्च कराने के मामले में इसरो पहली पसंद बन जाएगा, जिससे देश को आर्थिक तौर पर फायदा होगा। इसरो के प्रवक्ता अनुसार हमारा मकसद रिकॉर्ड बनाना नहीं है। हम सिर्फ अपनी लॉन्चिंग कैपेसिटी जांचना चाहते थे । इसकी कामयाबी से कमर्शियल लान्चिंग में हमारी पहचान और मजबूत होगी।

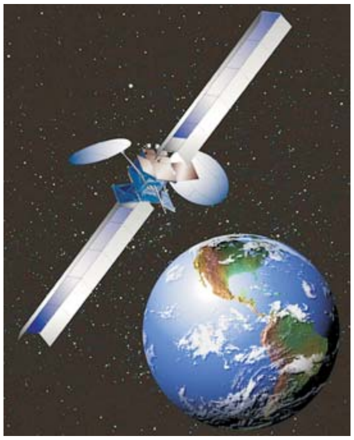

भारत को ये होंगे बड़े फायदे

कोर्टोसैट -2 शृंखला के उपग्रह के सफल प्रक्षेपण से भारत को कई फायदे होगें जिसमें अब भारत में किसी भी जगह को अंतरिक्ष से देखने की क्षमता भी हासिल होगी। कार्टोसैट-2 सीरीज के उपग्रहों में पैनक्रोमैटिक और मल्टीस्पेक्ट्रल इमेज सेंसर लगे हैं। इनसे रिमोट सेंसिंग में भारत की काबिलियत सुधरेगी। इन उपग्रहों से मिले डाटा का इस्तेमाल सड़क निर्माण के काम पर निगरानी रखने, बेहतर लैंड यूज और जल वितरण के लिए होगा। इसके साथ ही अंतरिक्ष से हाई रिजोल्यूशन की तस्वीर मुमकिन होगी। मसलन किसी भी इलाके की .60 मीटर तक की तस्वीर लेने की क्षमता विकसित होगी । इस क्षमता के चलते मैप रेग्युलेशन में कार्टोसैट उपग्रह बेहद कारगर हैं। दुश्मनों के सैनिक ठिकानों में गाड़ियों तक की तादाद बताने में ये उपग्रह कारगर हैं। लिहाजा रक्षा क्षेत्र में भी इन उपग्रहों की खासी अहमियत है। खासकर भारत की सरहद की निगरानी में इन उपग्रहों की भेजी तस्वीरें काफी काम आ सकती हैं। सरकार का इरादा कार्टोसैट सैटेलाइट्स को शहरी विकास और स्मार्ट सिटी के विकास की योजनाओं में भी इस्तेमाल करने का है। साथ ही इनके जरिये पर्यावरण को होने वाले नुकसान पर भी नजर रखी जा सकेगी।

मुश्किल है एक साथ ज्यादा उपग्रहों की लॉन्चिंग

इतने सारे उपग्रहों को एक साथ अंतरिक्ष में छोड़ना आसान काम नहीं है। इन्हें कुछ वैसे ही अंतरिक्ष में प्रक्षेपित किया गया जैसे स्कूल बस बच्चों को क्रम से अलग-अलग ठिकानों पर छोड़ती जाती है। बेहद तेज गति से चलने वाले अंतरिक्ष रॉकेट के साथ एक-एक सैटेलाइट के प्रक्षेपण का तालमेल बिठाने के लिए बेहद काबिल तकनीशियनों और इंजीनियरों की जरुरत पड़ती है। हर सेटेलाइट तकरीबन 7.5 किलोमीटर प्रति सेकेंड की रफ्तार से प्रक्षेपित होता है। अंतरिक्ष प्रक्षेपण के बेहद फायदेमंद बिजनेस में इसरो को नया खिलाड़ी माना जाता है। भरोसेमंद लॉन्चिंग में इसरो की ब्रांड वेल्यू में लगातार इजाफा हो रहा है। इससे लॉन्चिंग के कई और कॉन्ट्रेक्ट एजेंसी की झोली में गिरने की उम्मीद है।

अंतरिक्ष में भारत के बढ़ते कदम

कम लागत और लगातार सफल लांचिंग की वजह से दुनियाँ का हमारी स्पेस टेक्नॉलॉजी पर भरोसा बढ़ा है तभी अमेरिका सहित कई विकसित देश अपने सैटेलाइट की लाँचिंग भारत से करा रहें है। फ़िलहाल हम अंतरिक्ष विज्ञान, संचार तकनीक, परमाणु उर्जा और चिकित्सा के मामलों में न सिर्फ विकसित देशों को टक्कर दे रहें है बल्कि कई मामलों में उनसे भी आगे निकल गएँ है। अंतरिक्ष बाजार में भारत के लिए संभावनाएं बढ़ रही है, इसने अमेरिका सहित कई बड़े देशों का एकाधिकार तोडा है। असल में, इन देशों को हमेशा यह लगता रहा है कि भारत यदि अंतरिक्ष के क्षेत्र में इसी तरह से सफलता हासिल करता रहा तो उनका न सिर्फ उपग्रह प्रक्षेपण के कारोबार से एकाधिकार छिन जाएगा बल्कि मिसाइलों की दुनिया में भी भारत इतनी मजबूत स्थिति में पहुंच सकता है कि बड़ी ताकतों को चुनौती देने लगे। पिछले दिनों दुश्मन मिसाइल को हवा में ही नष्ट करनें की क्षमता वाली इंटरसेप्टर मिसाइल का सफल प्रक्षेपण इस बात का सबूत है कि भारत बैलेस्टिक मिसाइल रक्षा तंत्र के विकास में भी बड़ी कामयाबी हासिल कर चुका है। दुश्मन के बैलिस्टिक मिसाइल को हवा में ही ध्वस्त करने के लिए भारत ने सुपरसोनिक इंटरसेप्टर मिसाइल बना कर दुनियाँ के विकसित देशों की नींद उड़ा दी है। एक समय ऐसा भी था जब अमेरिका ने भारत के उपग्रहों को लाँच करने से मना कर दिया था। आज स्थिति ये है कि अमेरिका सहित तमाम देश खुद भारत के साथ व्यावसायिक समझौता करने को इच्छुक है। अब पूरी दुनिया में सैटलाइट के माध्यम से टेलीविजन प्रसारण, मौसम की भविष्यवाणी और दूरसंचार का क्षेत्र बहुत तेज गति से बढ़ रहा है और चूंकि ये सभी सुविधाएं उपग्रहों के माध्यम से संचालित होती हैं इसलिए संचार उपग्रहों को अंतरिक्ष में स्थापित करने की मांग में तेज बढ़ोतरी हो रही है। हालांकि इस क्षेत्र में चीन, रूस, जापान आदि देश प्रतिस्पर्धा में हैं, लेकिन यह बाजार इतनी तेजी से बढ़ रहा है कि यह मांग उनके सहारे पूरी नहीं की जा सकती। ऐसे में व्यावसायिक तौर पर यहाँ भारत के लिए बहुत संभावनाएं है। कम लागत और सफलता की गारंटी इसरो की सबसे बड़ी ताकत है जिसकी वजह से स्पेस इंडस्ट्री में आने वाला समय भारत के एकाधिकार का होगा । भविष्य में अंतरिक्ष में प्रतिस्पर्धा बढेगी क्योकि यह अरबों डालर का मार्केट है। भारत के पास कुछ बढत पहले से है, इसमें और प्रगति करके इसका बड़े पैमाने पर वाणिज्यिक उपयोग संभव है। भारत अंतरिक्ष विज्ञान में नई सफलताएं हासिल कर विकास को अधिक गति दे सकता है। देश में गरीबी दूर करने और विकसित भारत के सपने को पूरा करने में इसरो काफी मददगार साबित हो सकता है।

dwivedi.shashank15@gmail.com

❑❑❑

ब्रह्मोस

वायुसेना हुई और भी ताकतवर

ज़ाहिद खान

बंगाल की खाड़ी में ब्रह्मोस मिसाइल को दो इंजनों वाले सुखोई-30 एमकेआई लड़ाकू विमान से सफलतापूर्वक अपने निर्धारित लक्ष्य पर दाग कर भारतीय वायुसेना ने हाल ही में एक बड़ी कामयाबी हासिल की है। सुखोई विमान ने पश्चिम बंगाल के कलाईकुंडा एयरबेस से उड़ान भरी और बंगाल की खाड़ी में एक जहाज पर निशाना भेद कर अपना लक्ष्य पूरा किया। सुखोई-30 सुपरसोनिक एयरक्राफ्ट से इसका सफल प्रक्षेपण करने वाला भारत दुनिया का पहला देश है। इस सफल परीक्षण के बाद भारत जमीन, समुद्र और आकाश में सुपरसोनिक क्रूज मिसाइल को लांच करने वाला पहला देश बन गया है। मिसाईल के सफल प्रेक्षण से भारतीय वायुसेना को दुश्मनों के खिलाफ बहुत बड़ी ताकत मिल गई है। इससे युद्ध क्षेत्रों में वायुसेना की ताकत में और भी इजाफा होगा। जमीन के साथ-साथ अब ब्रह्मोस मिसाइल को हवा से भी दुश्मन के ठिकाने को बर्बाद करने के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। ब्रह्मोस मिसाइल के जरिए भारत ने रक्षा अनुसंधान के क्षेत्र में एक और मील का पत्थर स्थापित किया है। इस शानदार उपलब्धि के लिए रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन यानी डीआरडीओ एवं ब्रह्मोस टीम के वैज्ञानिक और इंजीनियर बधाई के पात्र हैं, जिन्होंने अपनी अथक मेहनत और मजबूत इरादे से यह शानदार कारनामा कर दिखाया।

भारत-रूस के संयुक्त प्रयास से निर्मित सुपर सोनिक क्रूज मिसाईल ब्रह्मोस, दुनिया में सबसे बड़े फ्रंट लाईन फाईटर जेट में इस्तेमाल होने वाले मिसाईलों में से एक है। इसे सबसे तेज एंटी-शिप क्रूज मिसाईल भी माना जाता है। इस मिसाइल को थल, जल और वायु में से कहीं से भी छोड़ा जा सकता है। यही नहीं इस प्रक्षेपास्त्र को पारम्परिक प्रक्षेपक के अलावा उर्ध्वगामी यानी कि वर्टिकल प्रक्षेपक से भी दागा जा सकता है। ब्रह्मोस को संमुद्र में लड़ाकू जहाजों से दागा जा सकता है, पानी के 40-50 मीटर के अंदर पनडुब्बी से भी दागा जा सकता है, तो जमीन से दागने के लिए इसे मोबाईल लांचर वैन पर सेट किया जाता है। ब्रह्मोस मिसाइल जमीन के नीचे परमाणु बंकरों, कमांड एंड कंट्रोल सेंटर्स और समुद्र के ऊपर उड़ रहे एयरक्राफ्ट्स को भी दूर से ही निशाना बनाने में सक्षम है। ब्रह्मोस की रेंज 400 किलोमीटर से ज्यादा है। मिसाइल 300 किलो वजनी एटमी हथियारों के साथ लक्ष्य पर हमला कर सकती है। यह मिसाइल आवाज की गति से लगभग 3 गुना ज्यादा की गति से उड़ सकती है। सटीक निशाने के चलते इसे 'दागो और भूल जाओ' मिसाइल भी कहा जाता है। ब्रह्मोस मेनुवरेबल मिसाइल है। दागे जाने के बाद लक्ष्य तक पहुँचते यदि उसका लक्ष्य मार्ग बदल ले, तो यह मिसाइल भी अपना मार्ग बदल लेती है और उसे निशाना बना लेती है। इसकी एक खासियत यह भी है कि यह मिसाइल आम मिसाइलों के विपरित हवा को खींच कर रेमजेट तकनीक से ऊर्जा प्राप्त करती है। ब्रह्मोस भारतीय थल सेना और नेवी के काफिले में पहले से ही शामिल है। साल 2005 में नौसेना को ये मिसाइल मिली थी। नौसेना के सभी डेस्ट्रोयर और फ्रीगेट युद्धपोतों में ब्रह्मोस मिसाइल लगी हुई हैं। साल 2007 में ब्रह्मोस मिसाइल सिस्टम

को इंडियन आर्मी के सैन्य बेड़े में शामिल किया गया। थलसेना के पास भी मौजूदा समय में ब्रह्मोस मिसाइल की तीन रेजिमेंट हैं। जिनमे से दो चीन सीमा पर तैनात हैं और एक पाकिस्तान सीमा पर है। भारतीय वायुसेना के पास फिलवक्त 240 सुखोई-30 एमकेआई लड़ाकू विमान हैं। निकट भविष्य में रक्षा मंत्रालय का इरादा है कि 42 सुखोई विमान ब्रह्मोस मिसाइल से लैस किये जाएं। ताकि वायुसेना का जंगी बेड़ा और भी ज्यादा मजबूत हो सके।

प्रक्षेपास्त्र तकनीक में दुनिया की कोई भी दूसरी मिसाइल तेज गति से आक्रमण के मामले में ब्रह्मोस की बराबरी नहीं कर सकती है। यहाँ तक की अमरीका की टॉम हॉक मिसाइल भी इसके आगे नाकाम साबित होती है। पड़ोसी देश की बात करें, तो ब्रह्मोस चीनी मिसाइल से तीन गुना तेज है। ब्रह्मोस मिसाइल को 'ब्रह्मोस एयर प्रोग्राम कंपनी' ने बनाया है। यह कंपनी भारत के डीआरडीओ और रूस के रक्षा संगठन एनपीओ मशीनोस्त्रोयेनिशिया का सयुंक्त उपक्रम है। रूस इस परियोजना में प्रक्षेपास्त्र तकनीक उपलब्ध करवा रहा है और उड़ान के दौरान मार्गदर्शन करने की क्षमता भारत के द्वारा विकसित की गई है। ब्रह्मोस दरअसल, रूस की पी-800 ओंकिस क्रूज मिसाइल की प्रौद्योगिकी पर आधारित है। बहरहाल ब्रह्मोस के सफल प्रक्षेपण के बाद दुनिया के कई देश भारत से ब्रह्मोस मिसाइल खरीदने में अपनी दिलचस्पी दिखा रहे हैं। इससे पहले दुबई एयर शो में भी ब्रह्मोस मिसाइल का प्रदर्शन किया गया था, जहाँ इसे खूब वाहवाही मिली। ब्रह्मोस मिसाइल की अद्भुत खूबियां ही हैं, जिसकी बदौलत 'ब्रह्मोस एयर प्रोग्राम कंपनी' को इस मिसाइल को बेचने के लिए करीब सात अरब डॉलर के घरेलू ऑर्डर मिल चुके हैं। अंतरराष्ट्रीय समझौतों के चलते साल 2016 से पहले भारत ब्रह्मोस का निर्यात नहीं कर सकता था, लेकिन 34 देशों के एमटीसीआर (मिसाइल टेक्नॉलॉजी कंट्रोल रिजाइम) में शामिल होने के बाद भारत को ब्रह्मोस की खरीद-फरोख्त का अधिकार मिल चुका है। ये तकनीकी अड़चन भी उसकी खत्म हो गई है।

वायुसेना के जंगी बेड़े में ब्रह्मोस के शामिल होने के बाद निश्चित तौर पर भारतीय सेना और भी ज्यादा मजबूत हुई है। पर ब्रह्मोस के अलावा भी भारत के पास कई मिसाइले हैं। इनमें अग्नि सीरिज की मिसाइल, 'नाग' और 'निर्भय' प्रमुख हैं। ब्रह्मोस की तरह निर्भय को भी थल, जल और वायु के लिए तैयार किया जा रहा है। यह एक स्टिल्थ सबसोनिक क्रूज मिसाइल है, जिसकी रेंज करीब तीन हजार किमी है। वहीं नाग एक एंटी टैंक मिसाइल है। यह जमीन से जमीन और हवा से जमीन पर हमला करने में सक्षम है। एमटीसीआर का सदस्य बनने के बाद साल 2016 में भारत और रूस ने ब्रह्मोस मिसाइल के रेंज को बढ़ाने पर काम शुरू किया था, जिसमें जमीन से मार करने वाले वर्जन की रेंज 450 किलोमीटर तक बढ़ायी गयी। फिलहाल इसकी रेंज को 800 किलोमीटर तक करने पर काम चल रहा है, जिसे दो साल में पूरा होने की उम्मीद है। 800 किलोमीटर के रेंज वाले ब्रह्मोस के विकसित होते ही चीन का हर हिस्सा भारत के मारक क्षमता में आ जायेगा। सामरिक दृष्टि से यह काफी महत्वपूर्ण होगा। इससे भारत की सैन्य क्षमता में वृद्धि होगी और भारतीय सेना दुश्मन देशों के क्षेत्र में जाए बगैर सैकड़ों किलोमीटर दूर उसके ठिकानों को सफलतापूर्वक निशाना बना सकेगी।

jahidk.khan@gmail.com

'भारत में विज्ञान एवं विज्ञान संचार की परंपरा'
लेखक : विश्वमोहन तिवारी
प्रकाशक : आईसेक्ट विश्वविद्यालय
मूल्य : 200 रुपये

प्रस्तुत किताब में विज्ञान की परंपरा और वर्तमान स्थिति का गंभीरता से विश्लेषण है। भारत में विज्ञान की परंपरा का प्रारम्भ वैदिक युग से ही हो जाता है। सनातन धर्म मूलतः विज्ञान का विरोध नहीं करता, क्योंकि उसकी सोच विज्ञान संगत है। इस पुस्तक में विज्ञान तथा विज्ञान संचार के विभिन्न आयामों को विभिन्न दृष्टियों से प्रस्तुत किया गया है। पुस्तक के लेखक विश्वमोहन तिवारी वरिष्ठ विज्ञान लेखक हैं। उनकी प्रसिद्ध कृतियाँ विज्ञान का आनंद, बोधिवृक्ष के नीचे, आनंद पक्षी निहारन का, सरल वैदिक गणित, खाड़ी युद्ध 91, यात्राओं का आनंद, नई दिशा, सुनो मनु, हमारे कलाम, उपग्रह के बाहर भीतर, इलेक्ट्रॉनिकी युद्ध कला आदि हैं। उन्हें आत्माराम पुरस्कार, मेघनाथ साहा पुरस्कार, सहस्राब्दि हिन्दी सेवी सम्मान, इंदिरा गांधी राजभाषा पुरस्कार, रक्षा मंत्रालय पुरस्कार, राहुल सांस्कृत्यान पुरस्कार, राष्ट्र गौरव सम्मान, विवेकानंद पुरस्कार, मैथिलीशरण गुप्त पुरस्कार, आर्य भट्ट सम्मान, तकनीकी मौलिक लेखन पुरस्कार, विज्ञान भूषण सम्मान, हिन्दी संवाहक सम्मान आदि पुरस्कार प्राप्त हुए हैं।

जहाँ तक नज़र जाती है, बर्फ ही बर्फ। चमकदार रोशनी आ रही है या जा रही है, बर्फ की परत तय नहीं करने देती। उसके दस्ताने स्पेस सूट का ही हिस्सा है, हथेली के पीछे वाले भाग पर ही पूरा स्विच पेनल है। उसने स्विच को उंगली से हमेशा की तरह फीदर टच देने की बजाय अंगूठे से कुछ निर्दयता से दबा दिया और अगले पल हथेली हलके से झटककर सीने पर चिपका ली।

उसके दिमाग में हलचल मच गयी, "मशीनों के साथ भी वही शिष्टता बरतो जो अपने लोगों के साथ स्वभावतः होती है।" तो, उसका यह बेढंगा एक्शन क्या धरतीवासियों के थॉट-ऑरबिट के असर में है? धरती के इस इलाके पर यहां के लोगों का भटकना करीब-करीब नहीं के बराबर हुआ है। इसे ये लोग अन्टार्कटिका कहते हैं। एक सीढ़ी और कुछ पिरामिडीय पहाड़ों को लेकर ही धरतीवासी भारी उलझन में अटके हुए हैं। पर इसकी अपनी उलझन हो गयी कि इस जगह पर धरतीवासियों की इतनी कम आवाजाही के बावजूद उनकी थॉट ऑर्बिट इतनी स्ट्रांग कैसे हो गयी?

लौटना जरूरी हो गया है, कदमों में तेजी आ गयी। एक पिरामीडीय चट्टानी पहाड़ की तरफ तेजी से लौट पड़ना सोच में कतई बाधा नहीं था। सीने पर हथेली टिकाने की मजबूरी लगातार कचौट रही है। इसने अपने अंगूठे की ओर देखा और सोचना फिर शुरू हो गया। सीने पर हथेली यानि पश्चाताप करने से मन की मलिनता साफ़ हो जाती है। इस पिरामिड के अन्दर ऑपरेशन सेंटर है। पथरीली इन्ग्रेशन मेहराब को पहचानना आसान नहीं पर वहां से पेनल बटनों का दबाना शुरू हुआ तो तभी ख़त्म हुआ, जब एक कमरे में ठहरना संभव हुआ। बीच में कई दहलीजें पार हुई एक एस्केलेटर से कई एस्केलेटरों पर सरकना अलग-अलग रोशनियों से गुजरना यह सब इतनी तेजी से बीत गया जैसे कोई फिल्म असामान्य तेजी से चला दी गयी हो।

उसने कमरे में सीधे "रे-वाश" का रुख किया। स्पेस सूट को एक रे-वाशिंग मशीन में सहेजकर रखा। फिर रे-शॉवर का स्विच ऑन करके उसके नीचे अपने आप को सीधा तान दिया। इन नम, गुनगुनी किरणों से भरी गयी ताजगी को उसने भरपूर महसूस किया। वार्ड रोब से एक बरमूडा और एक टी-शर्ट उसको काफी लगी।

रे-वाश से उसका बाहर निकलना और कमरे में उस दूसरे के कदम पड़ना एक साथ हुआ। दोनों की नज़रें मिली और दोनों चेहरे दिपदिपा गए।

"इतने जल्दी लौट... अरे ! तुम्हारा चेहरा इस अर्थ-ग्लोब के फीमेल जैसा क्यों हारा हारा बुझा बुझा सा हो रहा है?"

"फूहड़ जोक !.........पर..पर मैं दिक्कत में हूँ।"

"ओह, पार्डन मी.. वैसे क्या हुआ?"

"इस ग्लोब के आसपास ओज़ोन लेयर पतली हो रही है पर लोकल लोगों के थॉट-चर्निंग फ्यूम्स एक दूसरी लेयर बना रहे हैं,..." उसने अपनी टी-शर्ट नीचे खींचते हुए कहा।

"तो..." उसने उसके कन्धों पर हाथ रखे।

"ये फ्यूम्स एक साथ वेव भी है और पार्टिकल भी ...."

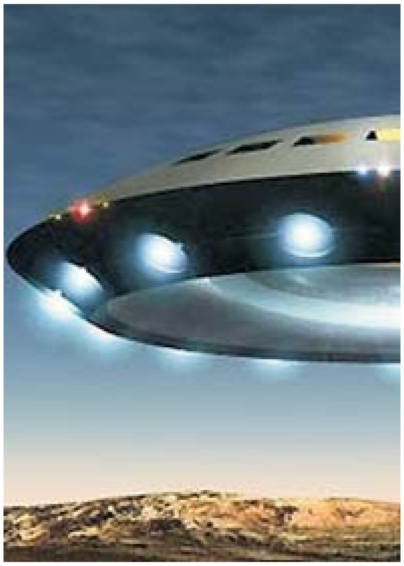

"हाँ"

"ये नोइज पोल्यूशन की तरह स्पेस को गन्दा करते हैं और सेंसर सिस्टम पर दबाव भी ... डालते हैं, किसी भी स्पेसीज की विजडम को डिस्टर्ब कर सकते हैं... "

उसने कन्धों से हाथ हटाकर उसके चिंताग्रस्त ओवल-शेप चेहरे को अपनी बड़ी बड़ी हथेलियों में भर लिया।

यह भी मुस्कराई, उसे लगा कोई कण या तरंग इस पल उन हथेलियों को पार नहीं कर सकती।

इसने उसे पूरी घटना बता दी, कैसे अंगूठे से स्विच दबाने में फीदर स्पर्श की जगह एक रूखी झुंझलाहट ने ले ली। अब चिंता यह है कि जिस कैम्पेन के लिए आये हैं उसमें ये थॉट फ्यूम्स कितनी बड़ी रुकावट बनेंगें। इनका रूकावट बनना मतलब हमारी अक्लमंदी हमारी दानिशमंदी को विपरीत ढंग से प्रभावित करना।

उसने यहाँ हौले से उसके गालों पर से हथेलियाँ हटाई पर तुरंत यहां इसकी नीली पुतलियाँ पलकों की सीमाओं से टकराती सी गोल गोल चारों ओर भागने लगी।

वह "बार" के सामने रुक गया। उसने एक एनर्जी ड्रिंक चुनी। यह बेचैनी को कंट्रोल करती है और याददाश्त को फिर से हासिल करती है। वह दो गिलास भरकर इसके सामने खड़ा हो गया।

"पहले आराम से बैठ जाओ,..इसे एक सांस में पूरा पी जाओ।"

उसने अपनी एनर्जी ड्रिंक ख़त्म की, गिलास को दोनों हथेलियों में इस तरह थामा जैसे गिरने से बचा रही हो। निश्चित ही यह बेचैनी और घबराहट दोनों की देह-भाषा है।

थरथराती आवाज में यह बोलने लगी- "धरतीवासियों के थॉट फ्यूम्स के असर में मैं आ चुकी हूँ, स्विच पेनल के साथ मेरी हरकत उसी वजह से हुई। रिग्रेट करने के लिए हथेली सीने पर रखी पर मन नहीं मान रहा है। मेरा ट्रीटमेंट करो, प्लीज।

वह उठा, उसके पीले पड़ते जा रहे गालों को थपथपाकर "डीवोल्युशन मशीन" की ऑपरेशन सीट पर बैठ गया। स्विच दबाते ही हवा में दूधिया रोशनी की एक स्क्रीन बिना किसी सहारे के लटक गयी। उसने घटना को जैसा का तैसा बोल दिया जिसने स्क्रीन पर इबारतों का रूप ले लिया। उसके "गो" बोलते ही पूरी कथा मेसेज बनकर उनके प्लेनेट पर पहुँच गयी, पल भर में वहां से आया एक जवाबी वाक्य स्क्रीन पर चमक उठा, "रिमैनिस ट्रीटमेंट शुरू करो"।

वह उठा फिर उसे उठाकर काउच पर बिठा दिया, खुद भी पालथी मारकर बैठ गया।

"मेरी तरफ देखो और मेरी तरह बैठो.."

इसने लटके पैरों को समेटा और पालथी मारकर अपना चेहरा उसकी तरफ करके बैठ गयी।

"इज इट रिमैनिस?" यह फुसफुसाई।

उसने हौले से सिर हिलाकर स्वीति दी, फिर अपने तर्जनी और अंगूठे से उसके दोनों कानों के लटके सिरों को सहलाना शुरू कर दिया।

"ओह! रिमैनिस ! ओके..। तो चलो रिमाईंड करो, दिलाओ याद दिलाओ, मुझे।" वह जैसे खुद में डूबने लगी।

"हम मनुष्य हैं।" इतनी प्रामाणिक, इतनी सच्ची और इतनी विश्वसनीय रंगत इस बात की धरती पर पहली बार दिखाई दी। उसने बोलना जारी रखा।

''हम मनुष्य हैं क्योंकि हमें जन्म लेते ही पहली सांस के साथ प्रेम में रहना आ जाता है। प्रेम ब्रम्हांड की वह डोर है जो प्राणी प्राणी, पदार्थ पदार्थ और प्राणी पदार्थ को एक साथ पिरोये रखती है। प्रेम एक कॉस्मिक पर्यावरण है। अस्तित्व का दिखाई देना ओझल हो जाना प्रेम का उगना और अस्त होना नहीं है। सारी मौजूदगियाँ और गैरमौजूदगियाँ प्रेम में उदय होती हैं और अस्त होती हैं। हम मनुष्यों को पता है कि प्रेम की लिपि स्पर्श है छुअन है। टच में इनविटेशन है या बायकाट, इंस्पायरेशन है या इरीटेशन, पुल या पुश सब फील होता है, इसीलिये हम मनुष्य होते हैं... "

"हाँ हाँ,...याद आ रहा है... " इसके चेहरे से पीलापन छंटने लगा। जैसे खुद से बात कर रही हो, ''अपने सीने पर हथेली रखने से मेरी माफ़ी मेरा पछतावा एक दूसरे में शामिल नहीं हुए, मैं भूल गयी स्विच जोर से दबाना मेरी बेचैनी नहीं है क्योंकि कई बार बटन जोर से दबाना मशीन की भी जरूरत होती है, असली कारण है उसे दबाने के पीछे की निर्दयता।" फिर इसने स्विच पेनल को बंद आँखों में देखते हुए अपनी हथेली अपने सीने पर रखकर नरमी से बुदबुदाई "सॉरी"। पीलापन साफ़ हो गया था, एक गुलाबीपन ने दोनों गालों पर उभर

उभर कर फैलना जारी रखा। इसके चेहरे पर दो-दो सुबहों का नज़ारा बन गया। लेफ्ट मॉर्निंग, राईट मॉर्निंग। उसने अपने दोनों अंगूठे, अप थम्स, उसके दोनों गालों पर टिकाकर फिर तुरंत हटाकर कहा "गुड मॉर्निंग्स"।

"मॉर्निंग्स?" वह अचकचाई, फिर अंगूठों पर नज़र डालकर खिलखिलाकर हसंते हुए इसने उसके चेहरे पर चुम्बनों की बौछार कर दी।

चेहरे का गीलापन अपने गालों से रगड़कर सुखाते हुए बोली "अब मैं ठीक हूँ। पर क्या आगे भी ऐसा हो सकता है?"

"नहीं। यह तभी हो सकता है जब हम, धरतीवासी मनुष्य को मनुष्य समझने की भूल रिपीट करते हैं।"

"पर उनका एकदम हमारे जैसा लगना हमें उलझा देता है,..."

"कहाँ है हमारे जैसे? हमारा डीएनए आज़ादी है, और पर्यावरण है प्रेम। प्रेम ब्रम्हांड की वह डोर है, जो प्राणी प्राणी, पदार्थ पदार्थ, प्राणी पदार्थ को पिरोये रखती है। मनुष्य के स्तर पर उसकी फ्रीडम को बरकरार रखते हुए फ्रीडम के वेग से मनुष्य और मनुष्यता को जो ताक़त बचाए रखती है वह प्रेम है। हमारे डीएनए और इनवायरनमेंट में आमना सामना है पर बड़ा ही दोस्ताना। धरती के ये दोपाये मनुष्य हैं, ओनली एंड ओनली मैमल्स। इनके डीएनए और इनवायरनमेंट में हमेशा वैमनस्य है, निर्दयता है। यह क़ुदरत के साथ रहना सीखता नहीं है। क़ुदरत पर जीत को पुरुषार्थ और क़ुदरत से हार को भाग्य कहता है।"

"फिर तो इन मैमल्स में मेल और फीमेल के रिलेशन हम जैसे शायद नहीं होंगें ?" इसकी आँखों में फ़िक्र दिखाई दी।

"राईट। यहाँ मेल अपनी चाहत के लिए अपनी मर्जी का सब कुछ समेटना चाहता है, पर देने में आनाकानी करता है। किसी कमिटमेंट से भी बचता है। फीमेल के मन में जाने के लिए वक़्त और साधन दोनों खूब खर्च करता है। बदले में फीमेल अपना विश्वास सौंपती है जिसे ये लोग लगाव कहते हैं। तुम जानती हो, ब्रह्माण्ड के किसी भी प्लेनेट पर फीमेल क़ुदरत का पूरा पूरा पर छोटा संस्करण 'कम्प्लीट मिनी एडिशन' होती है। क़ुदरत का स्वभाव है हर अस्तित्व को रंग रूप देना यानि पहचान देना, उसे पाल पोस कर टिकाऊ बनाना। धरती पर भी फीमेल लगाव में हो कर इस कनेक्शन को ख़ास रंग रूप कोई नाम देना चाहती है लेकिन कमिटमेंट से कतराने वाला मेल बच निकलना चाहता है "प्यार को प्यार ही रहने दो कोई नाम ना दो"। यहाँ प्रेम और आज़ादी विपरीतधर्मा है।"

"उफ़ ! इतना गैरक़ुदरती ..." इसकी आवाज में दर्द घुल गया।

"हाँ, हमारा मिशन याद है?" वह मुस्कुराया।

"हाँ हाँ , यहाँ के मेल को फीमेल के साथ रहना सिखाना। यह हमारे प्लेनेट का भरोसा है कि मेल जब फीमेल के साथ रहना सीख जाता है तो अपने आप बच्चों, बुजुर्गों और कमजोरों के साथ भी दोस्ताना हो जाता है। ग्लोबल सिटिज़न।" यह भी मुस्कुरा दी।

"रिमैनिस ट्रीटमेंट कामयाब हुआ। रिमैनिस यानि याद दिलाना, कितना कारगर है यह ट्रीटमेंट, है न?अब तुम्हारी मेमोरी परफेक्ट है?"

"हां। हमारा मिशन है इन धरती के वाशिंदों को भी याद दिलाकर होश में लाना।" इसकी पतली आवाज पक्के इरादे से भरी है।

"यकीनन, फिर इससे ज्यादा बर्फ बहने से, ओजोन घटने से, हरियाली हटने से, एटम-न्यूक्लीयर फटने लोगों के बंटने से धरती नंगी नहीं होगी।"

"हाँ, मेरे मालिक! कनीज़ साये की तरह आपके साथ है ..." उलाहने बतौर यह बोली।

"बकवास, बिलकुल रबिश ! मालिक ...कनीज़, घटिया बात ... " वह तमतमाया।

"क्यों, तुमने भी तो मुझे अर्थ-ग्लोब की फीमेल कहा था..."

"सॉरी।"

"काउंटर सॉरी।"

"हव्वा आदम, श्रद्धा मनु।" उसने धरती का स्मरण करते हुए अपने आप से कहा।

"इस बार ... साहब साहिबा" यह जैसे सारे संसार से बोली। भविष्य के प्रति पूर्ण आश्वस्त।

दोनों ठठाकर हंसते हुए एक दूसरे से लिपट गए।

laxmikantjawney@gmail.com

❑❑❑

मौसम विज्ञान

संजय गोस्वामी

मौसम विज्ञान (Meteorology) कई विधाओं को समेटे हुए विज्ञान है जो वायुमण्डल का अध्ययन करता है। मौसम विज्ञान में मौसम की प्रक्रिया एवं मौसम का पूर्वानुमान, समुद्र सतह तापमान महासागर की तापीय ऊर्जा, उर्ध्वाधर पवन दबाव, निचले स्तर की भ्रमिलता, मध्य स्तर की सापेक्ष आर्द्रता समताप गहराई तथा महासागर तापीय ऊर्जा, गहरी एवं आर्द्र वायुमंडलीय परत के माध्यम से स्थितिजन्य अस्थिरता, पहले से मौजूद विक्षोभ, पर्यावरणिक स्थितियाँ (उर्ध्वाधर पवन दबाव, निम्न स्तर भ्रमिलता, उच्च स्तर अपसरण आदि का अध्ययन होते हैं।

कल तक यह माना जाता था कि मौसम का संबंध केवल खेती-किसानी से ही है तो अब यह धारणा पुरानी हो चुकी है। सैटेलाइट के इस युग में सुनामी तूफान से बचने से लेकर एयरलाइंस जहाजों के परिवहन की उड़ानों, से लेकर खेल मैदानों की हलचल में मौसम विज्ञान महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। है। वे वेब के साथ जी.आई.एस. का उपयोग कर, भूगोलवेत्ता और जल वैज्ञानिक के साथ मिलकर सूचना जुटाते हैं और जी.आई.एस. के अनुप्रयोग द्वारा जल मौसम विज्ञान, जल गुणवत्ता स्थलों की स्थिति, नदी, प्रशासनिक आँकड़े, जल ग्रहण, भू आवरण, जल मार्ग इत्यादि से सम्बन्धित जानकारी हासिल की जाती है। जिनका उपयोग विषयगत जानकारी प्राप्त करने के लिये किया जा सकता है। मौसम वैज्ञानिक प्रारंभिक अवस्थिति एवं तीव्रता का पता लगाने के बाद पथ और तीव्रता के पूर्वानुमान का प्रयास करते है। उष्ण कटिबंधीय चक्रवात पथ पूर्वानुमान में सहदर्शी एवं उपग्रह/राडार मार्गदर्शन सहायक होता है, संख्यात्मक मौसम पूर्वानुमान का इस्तेमाल मुख्यत:, सर्वमान्य पूर्वानुमान हेतु किया जाता है जो संख्यात्मक पूर्वानुमान को पूरे अथवा आंशिक रूप में इकट्ठा करता है तथा आधिकारिक पूर्वानुमान जारी करने के लिए सहदर्शी एवं सांख्यिकीय मार्गदर्शन का इस्तेमाल किया जाता है। मौसम वह है जो रोज रात को टी.वी. पर दर्शाया जाता है जैसे- विभिन्न स्थानों पर अधिकतम एवं न्यूनतम तापमान, बादलों एवं वायु की स्थिति, वर्षा का पूर्वानुमान, आर्द्रता आदि। निर्धारित समय पर किसी स्थान पर वाह्य वातावरणीय परिस्थितियों में होने वाला परिवर्तन, मौसम कहलाता है। जलवायु शब्द किसी स्थान पर पिछले कई वर्षों के अन्तराल में वहाँ की मौसम की स्थिति को बताता है। पृथ्वी की जलवायु सौर, समुद्री, धरातलीय, वायुमण्डलीय एवं जैविक घटकों, जो पृथ्वी के जटिल तंत्र को बनाते हैं, के पारस्परिक क्रियाकलापों के परिणामस्वरूप ही सामने आई है। जलवायु वैज्ञानिक, किसी स्थान विशेष की जलवायु का पता लगाने के लिए कम से कम 30 वर्ष की मौसम की जानकारी को आवश्यक हैं।

मौसम विज्ञान के इतने अधिक आयाम हैं कि इस क्षेत्र में अध्ययन कर अपनी अभिरुचि के अनुसार परिचालन, अनुसंधान तथा अनुप्रयोग अर्थात ऑपरेशंस-रिसर्च या एप्लिकेशंस ,पर्यावरणिक स्थितियाँ के क्षेत्र में बहुआयामी करियर बनाया जा सकता है। मौसम विज्ञान में ऊर्ध्ववाधर पवन दबाव, निम्न स्तर भ्रमिलता, उच्च स्तर अपसरण आदि का अध्ययन होते हैं। यह समुद्र में आने वाले तूफान तथा चक्रवाती हवाओं भविष्यवाणी की से मछुआरों तथा समुद्री राह में चलने वाले जहाजों को सुरक्षा प्रदान का कार्य करती है। इस क्षेत्र में करियर बनाने के लिए क्लाइमेटोलॉजी, हाइड्रोमेटोलॉजी, मेरिन मीट्रियोलॉजी और एविएशन मीट्रियोलॉजी में विशेषता हासिल करना होता है। रात के समाचार, में तापमान, आर्द्रता, फसल उत्पादन और यात्रा के लिए मौसम की नजर रखने और अनुमान लगाने के लिए मौसम विज्ञान

मुख्य विषय

मौसम विज्ञान विषय में क्लाइमेटोलॉजी, साइनोप्टिक मेटियोरोलॉजी, डायनेमिक मेटियोरोलॉजी, फिजिकल मेटियोरोलॉजी, एग्रीकल्चरल मेटियोरोलॉजी व अप्लाइड मेटियोरोलॉजी है। मौसम विज्ञान में कैलकुलस, मौसम विज्ञान का परिचय, चार्ट और आरेखों की तैयारी,भूमि और महासागर का वितरण भूकंप, ज्वालामुखी अध्ययन, रेखीय बीजगणित,पर्यावरण विज्ञान, मौसम और जलवायु ,वैकल्पिक मॉड्यूल, परमाणु भौतिकी, पृथ्वी सामग्री, पर्यावरण के मुद्दे,गणित, वैश्विक पर्यावरण, रसायन विज्ञान,गणितीय मॉडलिंग प्राकृतिक का परिचय, भौतिकी, सांख्यिकी, वास्तविक विश्लेषण आदि विषय शामिल हैं।

योग्यता

मौसम विज्ञान में ग्रेजुएशन करने के लिए फिजिक्स, कैमिस्ट्री और मैथ्स विषयों में 50 प्रतिशत अंकों के साथ 12वीं आवश्यक है। भौतिकी, रसायन विज्ञान के साथ अगर अभ्यर्थी के ग्रेजुएशन की योग्यता है तो वह मौसम विज्ञान/वायुमंडलीय विज्ञान के पोस्ट ग्रेजुएशन डिप्लोमा कोर्स में दाखिला ले सकते हैं। जो मौसम विज्ञान में स्नातकोत्तर पाठयक्रम करना चाहते हैं, उनके पास भौतिक एवं गणित विषयों के साथ स्नातक डिग्री होना जरूरी है।

सैलरी

मौसम विज्ञान से जुड़े प्रोफेशनल्स की प्रारंभिक सैलरी 50 हजार रुपये महीना से लेकर पद और अनुभव के साथ 1 से 2 लाख प्रतिमाह भी हो सकती है।

महत्वपूर्ण है। जो भारी बारिश, तेज हवाओं, गंभीर मौसम और धूल के तूफान महत्वपूर्ण जानकारी देता है मौसम विज्ञान के क्षेत्र में अध्ययन कर अपनी अभिरुचि के अनुसार परिचालन, अनुसंधान तथा अनुप्रयोग अर्थात ऑपरेशंस-रिसर्च या एप्लिकेशंस के क्षेत्र में बहुआयामी कॅरियर बनाया जा सकता है।हवा, बादल, समुद्र, बरसात, धुँध-कोहरे, आँधी-तूफान और बिजली में दिलचस्पी है तो मौसम विज्ञान का क्षेत्र एक शानदार करियर प्रदान करेगा। समुद्री मैट्रोलॉजी के तहत जहाजों की आवश्यकता के अनुसार प्रत्येक क्वाड्रैंट में पश्चिमोत्तर, पूर्वोत्तर, दक्षिण पूर्व, दक्षिण पश्चिम 30-60 नॉट, की अधिकतम पवन त्रिज्या की चक्रवात पवन त्रिज्याएं तैयार की जाती हैं। उष्ण कटिबंधीय चक्रवात की पवन त्रिज्या का प्रारंभिक आकलन एवं पूर्वानुमान लगाया है और यह डेटा की उपलब्धता, जलवायु एवं विश्लेषण पद्धतियों पर अत्यधिक निर्भर करता है।

इतिहास : मौसम विज्ञान का इतिहास हजारों वर्ष पुराना है किन्तु अट्ठारहवीं शती तक इसमें खास प्रगति नहीं हो सकी थी। उन्नीसवीं शती में विभिन्न देशों में मौसम के ऑकड़ों के प्रेक्षण से इसमें गति आयी। बीसवीं शती के उत्तरार्ध में मौसम की भविष्यवाणी के लिये कम्प्यूटर के इस्तेमाल से इस क्षेत्र में क्रान्ति आ गयी। 1864 में चक्रवात के कारण कलकत्ता में हुई क्षति और 1866 और 1871 के अकाल के बाद, मौसम संबंधी विश्लेषण और संग्रह कार्य करने का निर्णय लिया गया। नतीजतन, 1875 में भारतीय मौसम विज्ञान विभाग की स्थापना हुई। मौसम विज्ञान विभाग का मुख्यालय 1905 में शिमला, फिर 1928 में पुणे और अंततः नई दिल्ली में स्थानांतरित किया गया। सुनामी तूफान से बचने से लेकर एयरलाइंस जहाजों के परिवहन की उड़ानों, से लेकर खेल मैदानों की हलचल में मौसम विज्ञान महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

तूफान पूर्वानुमान : अनेक उष्णकटिबंधी चक्रवातों जैसे हेलन, फालिन, लहर, महासेन, माडी, के संदर्भ में जारी की गई मौसम संबंधी प्रचालनगत भविष्यवाणियों और चेतावनियों के मामले मौसम वैज्ञानिक करते है मौसम वैज्ञानिकों द्वारा तूफान की लहरों के प्रवाह, चक्रवात के मार्ग और प्रकोप के स्थान, उच्च तरंगों और तत्संबंधी वर्षा और फालिन तूफान के बारे में सही पूर्वानुमान की बदौलत लोगों की जान बचाया जा सकता है

भारतीय मौसम विज्ञान में इस क्षेत्र के विशेषज्ञों को सबसे ज्यादा नौकरी के अवसर मिलते हैं। इसके अलावा लोक निर्माण विभाग, विद्युत, डाकतार विभाग व रेलवे जैसे कुछ सार्वजनिक उपक्रमों में भी मौसम विशेषज्ञों की नियुक्ति की जाती है साथ ही सशस्त्र सेना, नौ सेना व वायु सेना में भी मौसम संबंधित जानकारी के लिए मौसम वैज्ञानिकों की जरूरत होती है। ऑपरेशंस के तहत मौसम उपग्रहों, राडार, रिमोट सेंसर तथा एयर प्रेशर, टेम्प्रेचर, एनवायरमेंट, ह्यूमिडिटी से संबंधित सूचनाएँ एकत्रित कर मौसम की भविष्यवाणी की जाती है। मौसम विज्ञान में चक्रवात की उत्पत्ति के पूर्वानुमान हेतु समुद्र सतह तापमान महासागर की तापीय ऊर्जा, उर्ध्वाधर पवन दबाव, निचले स्तर की भ्रमिलता, मध्य स्तर की सापेक्ष आर्द्रता, ऊपरी स्तर का अपसरण, आर्द्र स्थैतिक स्थिरता तथा निम्न एवं उच्च स्तर पवन आदि जैसी व्याप्त पर्यावरणिक परिस्थितियों पर भी विचार किया जाता है। मौसम विज्ञान में संख्यात्मक मौसम पूर्वानुमान मॉडल विश्लेषण एवं पूर्वानुमान के इन सभी क्षेत्रों पर भी विचार किया जाता है। उपग्रह एवं राडार प्रेक्षणों में अभिलाक्षणिक विशेषताओं के विकास को भी ध्यान में रखा जाता है। चक्रवात की उत्पत्ति को मॉनीटर करने के लिए उत्पत्ति प्राचलों का मूल्यांकन संख्यात्मक मौसम पूर्वानुमान तथा चक्रवात की उत्पत्ति के लिए गतिकीय एवं साख्यिकीय मॉडल का पूर्वानुमान किया जाता है

मौसम विज्ञान में कॅरियर बनाने के लिए छात्र की साइंस या इससे संबंधित विषयों में दिलचस्पी होनी चाहिए। साथ ही सतर्कता भी इस क्षेत्र की खास निशानी है। इस क्षेत्र में

नई-नई गतिविधियां आती भी रहती हैं तो इसके लिए सतर्क रहना आवश्यक है। साथ ही आंकड़े संग्रह करने के लिए सांख्यिकी व मैथ्स अच्छी होनी चाहिए। जिसमें आँकड़ों का संग्रहण, प्रदर्शन, वर्गीकरण और उसके गुणों का आकलन का अध्ययन किया जाता है। मौसम विज्ञान में क्रिएटिव होना भी जरूरी है।मौसम विज्ञान में हवा की दिशा,मौसम फलक, वात दिग्दर्शक, गीला और सूखी-बल्ब थर्मामीटर, नमी, पवन गेज, स्टीवनसन की स्क्रीन, धूप रिकॉर्डर धूप के घंटे रिकॉर्ड करने के लिए, तापमान जानने, थर्मामीटर के बारे में आवश्यक ज्ञान जरूरी है। इसलिए मौसम विज्ञान के क्षेत्र में इंस्ट्रुमेंटेशन, इलेक्ट्रिकल या कम्प्यूटर इंजीनियरिंग का अध्ययन करने की आवश्यकता होती है। ऑपरेशंस के तहत मौसम उपग्रहों, राडार, रिमोट सेंसर द्वारा तापमान तथा एयर प्रेशर, माइक्रो-सीएमएम 3 डी समन्वय मैट्रोलॉजी, एनवायरमेंट, से संबंधित सूचनाएँ एकत्रित कर मौसम की भविष्यवाणी की जाती है। सौर ऊर्जा , पवन ऊर्जा समुद्र लहरें से ऊर्जा को अर्जित करने के लिये मौसम की जानकारी जरूरी है जरूरतों के अनुसार अपने आप से परीक्षण मापदंडों का चयन कर सकते हैं, नमूना अंतराल समय प्रत्येक संवेदक अलग से सेट किया जा सकता है। मौसम विभाग पूर्वानुमान के जरिए परिवहन, दूरसंचार, रक्षा तथा विमानन क्षेत्र के लिए मौसम संबंधी सूचनाएं उपलब्ध कराता है।मापने के लिए इस्तेमाल किया गया उपकरण तापमान को माप करने के लिए थर्मामीटर, (जिसमें एक तरल पतली स्तंभ, जैसे पारा का फैलाव), एसीपी, बिजली की आपूर्ति के लिए बैटरी, पावर एडाप्टर, रिकॉर्डिंग के लिए परीक्षण समय, रिकॉर्ड क्षमता डेटा के समूहों रिकॉर्डिंग, समय अंतराल, संचार इंटरफेस, यूएसबी इंटरफेस, बैटरी, एसी बिजली की आपूर्ति महत्वपूर्ण उपकरण है। कम्प्यूटर से डेटा अपलोड किया जा सकता और निर्यात करने के लिए एक्सेल, डेटा वक्र ड्राइंग, मानचित्र मुद्रण आदि की जानकारी जरूरी है। तापमान के सही माप के लिए विभिन्न जटिल सूक्ष्म और नैनोपारों के त्रि-आयामी (3 डी) माप एक नई तकनीक है इसके लिए बेहतर मेट्रोलॉजिकल वैज्ञानिकों की मांग बढ़ती जा रही है। यह नैनोपारों के त्रि-आयामी (3 डी) माप का उपयोग कई औद्योगिक उत्पादों जैसे कि मोटर वाहन, चिकित्सा, रोबोटिक्स और दूरसंचार क्षेत्र में हैं।

विभिन्न कोर्सेज

• मौसम विज्ञान और वायुमंडलीय विज्ञान में डिप्लोमा • मौसम विज्ञान में बीएससी • बीटेक-मौसम विज्ञान/वायुमंडलीय विज्ञान • बीटेक-वायुमंडलीय विज्ञान • मौसम विज्ञान में बी.टेक • एम.टेक- मौसम विज्ञान • मौसम विज्ञान में एमएससी • मौसम विज्ञान में पीएचडी

मुख्य संस्थान

• बनारस हिंदू विश्वविद्यालय (बीएचयू), वाराणसी •सेंटर फॉर एटमॉस्फेरिक एंड ओशोनिक साइंस, आईआईएम, बैंगलूर, •कोचीन यूनिवर्सिटी ऑफ साइंस एंड टेक्नॉलॉजी, कोचीन, केरल •पंजाब विश्वविद्यालय, पटियाला, पंजाब, •शिवाजी विश्वविद्यालय, विजयनगर, कोल्हापुर, महाराष्ट्र •आईआईटी, दिल्ली •जवाहर लाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर •अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय, भोपाल • इंदिरा गाँधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर •इंडियन इंस्टीट्यूट आफ साइंस, बैंगलुरू • कोचीन यूनिवर्सिटी ऑफ साइंस एंड टेक्नॉलॉजी, कोच्चि • शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापुर •आणंद कृषि विश्वविद्यालय, आणंद •सीसीएस हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार •गोविंद बल्लभपंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, पंतनगर •पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना।

goswamisanjay80@yahoo.com

संभावनाएं

भारतीय मौसम विभाग में फैले अपने केंद्रों के बड़े नेटवर्क की सहायता से मौसम संबंधी आंकड़े इकट्ठा कर एवं उनका विश्लेषण करके, हमें मौसम के बदलते मिजाज से अवगत कराता है। यह सब मौसम विज्ञान या मेटियोरोलॉजी है। इसके अंतर्गत मौसम में हो रहे परिवर्तनों का अध्ययन व आंकलन किया जाता है। सरकारी विभागों से लेकर मौसम विज्ञान की भविष्यवाणी करने वाली प्रयोगशालाओं, अंतरिक्ष विभाग और टेलीविजन चैनल पर मौसम विज्ञान एक अच्छे कॅरियर की संभावनाएं है। इसके अलावा राष्ट्रीय सुदूर संवेदन केन्द्र (एन.आर.एस.सी.) द्वारा केन्द्रीय जल आयोग (सी.डब्लू.सी.), जल संसाधन मन्त्रालय, भारत सरकार में भी अच्छा मौका है। सरकारी विभागों से लेकर मौसम विज्ञान की भविष्यवाणी करने वाली प्रयोगशालाओं, अंतरिक्ष विभाग और टेलीविजन चैनल पर मौसम विज्ञान एक अच्छे कॅरियर की संभावनाएं है।

पाठयक्रम

मौसम विज्ञान पाठयक्रम में उम्मीदवारों का चयन प्रवेश परीक्षा के द्वारा होता है। यह प्रवेश परीक्षा अखिल भारतीय स्तर की होती है, जिसमें मेरिट के आधार पर विद्यार्थियों को विभिन्न राज्यों के कॉलेजों-यूनिवर्सिटी में प्रवेश दिया जाता है। जो मौसम विज्ञान में स्नातकोत्तर पाठयक्रम करना चाहते हैं, उनके पास भौतिक एवं गणित विषयों के साथ स्नातक डिग्री होना जरूरी है।

ज़िन्दगी जीने के लिए

इरफान ह्यूमन

21 मार्च को प्रतिवर्ष विश्व डाउन सिन्ड्रोम दिवस (World Down Syndrome Day) मनाया जाता है। वास्तव में डाउन सिंड्रोम बच्चों की एक गंभीर समस्या है, जिससे उनका शारीरिक विकास आम बच्चों की तरह नहीं हो पाता। उनका दिमाग भी सामान्य बच्चों की तरह काम नहीं करता। कई बार उनके व्यक्तित्व में कुछ विकृतियां दिखाई देती हैं। यहाँ ध्यान देने वाली बात यह है कि बस प्यार और अच्छी देखभाल से ऐसे बच्चों को सामान्य जीवन दिया जा सकता है।

डाउन सिंड्रोम एक आनुवंशिक या क्रोमोसोम जनित विकार है और ये एक जीवनपर्यन्त स्थिति है जो शरीर में क्रोमोसोम्स का एक अतिरिक्त जोड़ा बन जाने से होती है। सामान्य रूप से शिशु 46 क्रोमोसोम के साथ पैदा होते हैं। 23 क्रोमोसोम का एक सेट शिशु अपने पिता से और 23 क्रोमोसोम का एक सेट वे अपनी मां से ग्रहण करते हैं। डाउन सिंड्रोम से पीड़ित शिशु में एक अतिरिक्त क्रोमोसोम आ जाता है जिससे उसके शरीर में क्रोमोसोम्स की संख्या बढ़कर 47 हो जाती है। यह आनुवंशिक परिवर्तन शारीरिक विकास और मस्तिष्क के विकास के गति को धीमा कर देता है और शिशु में मद्धम से औसत बौद्धिक विकलांगता का कारण बनती है। यह समस्या लड़कों में ज़्यादा देखने को मिलती है।

डाउन सिंड्रोम पीडित बच्चों में लक्षण हल्के से लेकर गंभीर तक हो सकते हैं। ऐसे बच्चे की मांसपेशियां सामान्य बच्चों के मुकाबले कम ताकतवर होती हैं। हालांकि आयु बढ़ने के साथ-साथ मांसपेशियों की ताकत बढ़ती रहती है, लेकिन ऐसे बच्चे सामान्य बच्चों की तुलना में बैठना, चलना या उठना सीखने में ज्यादा समय लेते हैं। इस समस्या से पीडित बच्चों को दिल संबंधी बीमारी होने की आशंका ज्यादा होती है। उनका बौद्धिक, मानसिक व शारीरिक विकास धीमा होता है। कई बच्चों के चेहरों पर विशिष्ट लक्षण देखने को मिलते हैं। जैसे कान छोटे होना, चेहरा सपाट होना, आंखों के ऊपर तिरछापन होना, जीभ बड़ी होना आदि।

डाउन सिंड्रोम पीडित बच्चों की रीढ़ की हड्डी में भी विकृति हो सकती है। कुछ बच्चों को पाचन की समस्या भी हो सकती है तो कई बच्चों को किडनी संबंधित परेशानी हो सकती है। इनकी सुनने-देखने की क्षमता कम होती है।

शिशु के जन्म के बाद उसका पूर्ण इलाज संभव नहीं है। प्यार ही उसका इलाज है। उसे ऐसा वातावरण देना चाहिए जिसमें वह सामान्य जिंदगी जीने की कोशिश कर सके। मानसिक व बौद्धिक विकास के लिए विशेषज्ञों की मदद ली जा सकती है। डाउन सिंड्रोम को रोका नहीं जा सकता है लेकिन अगर आप डाउन सिंड्रोम वाले शिशु को जन्म देने की आशंका के दायरे में आते हैं या आप इस विकार से पीड़ित बच्चे के माता या पिता है तो दूसरा बच्चा पैदा करने की योजना बनाने से पहले किसी आनुवंशिक काउंसलर से मिला जा सकता है।

वन्यजीव सुरक्षा की ज़रूरत

उल्लेखनीय है कि 20 दिसंबर, 2013 को संयुक्त राष्ट्र महासभा ने अपने 68 वीं महासभा में वन्यजीवों की सुरक्षा के प्रति लोगों को जागरूक करने एवं लुप्तप्राय प्रजाति के प्रति जागरूकता बढ़ाने हेतु 3 मार्च को प्रतिवर्ष विश्व वन्यजीव दिवस (World Wildlife Day) मनाने की घोषणा की थी। जंगली जीव हर उस वनस्पति या जन्तु को कहते हैं जिसे मानवों द्वारा पालतू न बनाया गया हो। जंगली जीव दुनिया के सभी परितंत्रों (ईकोसिस्टम) में पाए जाते हैं, जिनमें रेगिस्तान, वन, घासभूमि, मैदान, पर्वत और शहरी क्षेत्र सम्मिलित हैं। मनुष्यों ने बहुत से जंगली जीवों को पूरी दुनिया में अपने प्रयोग के लिए पालतू बनाया है, जिसका वातावरण पर गहरा प्रभाव पड़ा है।

भारत की पारिस्थितिक व भौगोलिक दशाओं में विविधता पायी जाती है और हमारा देश विश्व में महा जैवविविधता की श्रेणी

में आता है। संपूर्ण विश्व में कुल जीव-जंतुओं के 15,00,000 ज्ञात प्रजातियों में से लगभग 81,000 प्रजातियां भारत में मिलती हैं। देश में स्वच्छ और समुद्री जल की मछलियों की 2500 प्रजातियां हैं। भारत में पक्षियों की 1200 प्रजातियां तथा 900 उप-प्रजातियां पायी जाती हैं। अफ्रीकी, यूरोपीय एवं दक्षिण-पूर्वी एशियाई जैव-तंत्रों के संगम पर अवस्थित होने के कारण भारत में इनमें से प्रत्येक जैव-तंत्र के तरह-तरह के प्राणी भी पाये जाते हैं।

जैव संरक्षण, प्रजातियां, उनके प्राकृतिक वास और पारिस्थितिक तंत्र को विलोपन से बचाने के उद्देश्य से प्रकृति और पृथ्वी की जैव विविधता के स्तरों का वैज्ञानिक अध्ययन है। यह विज्ञान, अर्थशास्त्र और प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन के व्यवहार से आहरित अंतरनियंत्रित विषय है। वर्ष 1978 में ला जोला, कैलिफोर्निया स्थित कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय में आयोजित सम्मेलन में वैज्ञानिकों के बीच उष्णकटिबंधीय वनों की कटाई, लुप्त होने वाली प्रजातियों और प्रजातियों के भीतर क्षतिग्रस्त आनुवंशिक विविधता पर चिंता से उभरी। परिणत सम्मेलन और कार्यवाहियों ने एक ओर उस समय के पारिस्थितिकी सिद्धांत और जीव-समुदाय जैविकी के बीच मौजूद अंतराल को पाटने और दूसरी ओर संरक्षण नीति और व्यवहार की मांग की।

जैव विविधता के अनेक संकट, जिनमें जलवायु परिवर्तन और कई रोग शामिल हैं, कुछ अन्य भी हैं जैसे वनों की कटाई, अधिक चराई, काटना और जलाना कृषि, शहरी विकास, वन्य-जीवन व्यापार, प्रकाश प्रदूषण और कीटनाशकों का उपयोग। यहाँ जलवायु परिवर्तन को अक्सर एक गंभीर खतरे के रूप में उद्धृत किया जाता है। वैश्विक तापन का प्रभाव वैश्विक जैविक विविधता की बड़े पैमाने पर विलुप्ति की दिशा में विपत्तिपूर्ण ख़तरा जोड़ता है। अनुमान लगाया जा रहा है कि वर्ष 2050 तक सभी प्रजातियों के लिए विलुप्त होने के खतरे को 15 से लेकर 37 प्रतिशत के बीच या अगले 50 वर्षों में सभी प्रजातियों के 50 प्रतिशत होने का अनुमान लगाया गया है। प्राकृतिक-वास विखंडन बहुत कठिन चुनौतियों में से एक है, क्योंकि संरक्षित क्षेत्रों के वैश्विक नेटवर्क पृथ्वी की सतह के केवल 11.5 प्रतिशत को आवृत्त करते हैं। विखंडन का एक महत्वपूर्ण परिणाम और कड़ीयुक्त संरक्षित क्षेत्रों की कमी वैश्विक स्तर पर जानवरों के प्रवास की कमी है। इस विचार को लेते हुए कि पृथ्वी भर में पोषक आवर्तन के लिए करोड़ों टन बायोमास जिम्मेवार हैं, जैविकी संरक्षण हेतु प्रवास की कमी एक गंभीर मामला है।

लुप्तप्राय वन्यजीव प्रजातियां, ऐसे जीवों की आबादी है, जिनके लुप्त होने का जोखिम है, क्योंकि वे या तो संख्या में कम है, या बदलते पर्यावरण या परभक्षण मानकों द्वारा संकट में हैं। साथ ही, यह वनों की कटाई के कारण भोजन या पानी की कमी को भी द्योतित कर सकता है। प्रकृति के संरक्षणार्थ अंतर्राष्ट्रीय प्रकृति संरक्षण संघ (International Union for Conservation of Nature), जो अपने संक्षिप्त प्रयोजनों के लिए सभी प्रजातियों को वर्गीकृत करता है, ने वर्ष 2006 के दौरान मूल्यांकन किए गए प्रजातियों के नमूने के आधार पर, सभी जीवों के लिए लुप्तप्राय प्रजातियों की प्रतिशतता की गणना 40 प्रतिशत के रूप में की है। कई देशों में संरक्षण निर्भर प्रजातियों के रक्षणार्थ कानून बने हैं-उदाहरण के लिए, शिकार का निषेध, भूमि विकास या परिरक्षित स्थलों के निर्माण पर प्रतिबंध। विलुप्त होने की संभावना वाली कई प्रजातियों में से वास्तव में केवल कुछ ही इस सूची में दर्ज हो पाते हैं और कानूनी सुरक्षा प्राप्त करते हैं। वन्यजीवन हमारी पारिस्थितिकी का एक महत्वपूर्ण घटक है। हमे इसकी सुरक्षा के सदैव तत्पर रहना होगा।

विज्ञान में महिलाएँ

8 मार्च को प्रतिवर्ष अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस (International Women's Day) मनाया जाता है। विज्ञान के क्षेत्र में महिलाओं की भागीदारी की बात की जाए तो वैज्ञानिक सम्मेलनों और संगोष्ठियों में उनकी उपस्थिति महिलाओं की विज्ञान में दशा और दिशा को दर्शाती हैं। एक बार मैंने विज्ञान लेखक संघ के चुनाव के समय मात्र एक महिला को उपस्थित देखा, यह पहला मौका नहीं था अन्य कई वैज्ञानिक उत्सवों में महिलाओं की कम भागीदारी या अनुपस्थिति कई प्रश्न खड़े करती है। हालांकि छात्राएं आज छात्रों के मुक़ाबले शिक्षा के क्षेत्र में बाज़ी मार रही हैं, लेकिन विज्ञान की उच्च्य शिक्षा और शोध कार्य तक आते-आते यह संख्या उंगलियों पर गिनने लायक रह जाती है। सच यह है कि छात्राएं विज्ञान और इसी तरह के चुनौतीपूर्ण क्षेत्रों में करियर बनाने को लेकर उत्साहित नहीं होतीं दूसरी ओर इस संबंध में न तो उन्हें उचित मार्गदर्शन मिलता है और न ही प्रोत्साहन। अगर विज्ञान में महिलाओं की भागीदारी की बात की जाए तो उन्नीसवीं सदी में चिकित्सक आनंदीबाई जोशी, जिन्होंने 1886 में अमेरिका के फिलाडेल्फिया विश्वविद्यालय से चिकित्सक की डिग्री हासिल की थी, से शुरू हुई यात्रा बीसवीं सदी में जानकी अम्माल, कमला सोहोनी, अण्णा मणि, असिमा चटर्जी, राजेश्वरी चटर्जी, दर्शन रंगनाथन, मंगला नार्लिकर जैसे अनेक वैज्ञानिकों के जरिये मौजूदा सदी में यमुना कृष्णन, शुभा तोले, प्रेरणा शर्मा, नीना गुप्ता, चारुसिता चक्रवर्ती,

क़मर रहमान आदि तक पहुँची है।

भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संस्थान (इसरो) के एक साथ 104 उपग्रह छोड़कर विश्व रिकार्ड बनाने की टीम में मीनल संपत, अनुराधा टी.के., रितु करीधल, मुमिता दत्ता, नंदिनी हरिनाथ, कृति फौजदार, एन. वलामर्थी और टेसी थॉमस जैसी महिला वैज्ञानिक भी शामिल थीं, जो अपनी प्रतिभा और मेहनत के बूते विशेष तौर पर देश की सेवा कर रही हैं। ये उपस्थिति सिद्ध करती है कि विज्ञान के क्षेत्र में महिलाएं अपना अप्रतिम योगदान कर सकती हैं। लेकिन, उच्च शिक्षा और शोध के स्तर पर महिलाओं की संख्या संतोषजनक बनाने की ज़रूरत है। यह सोचने की बात है कि वैज्ञानिक संस्थानों से संबद्ध संस्थाओं में महिलाओं की मौजूदगी के मामले में भारत 69 देशों की सूची में लगभग सबसे निचले पायदान पर है।

विज्ञान पत्रिका 'नेचर' के ताजा सर्वेक्षण के अनुसार भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी में वर्ष 2013 में कुल 864 सदस्यों में सिर्फ 52 महिलाएं थीं। वर्ष 2014 तक इस संस्थान के 31 सदस्यीय अधिशासी समिति में एक भी महिला सदस्य नहीं थी। भारत की तुलना में अमेरिका, स्विट्जरलैंड और स्वीडन में राष्ट्रीय अकादमी के शासन मंडल में 47 फीसदी महिलाएं हैं, क्यूबा, नीदरलैंड और ब्रिटेन में विज्ञान अकादमियों में 40 फीसदी से अधिक महिलाएं हैं। आज आवश्यकत है कि महिला सशक्तीकरण के प्रयासों के अर्न्तगत विज्ञान में महिलाओं की भागीदारी को बढ़ाया जाये तथा सामाजिक और सांस्थानिक भेदभावों समाप्त किया जाए क्योंकि महिलाओं की समुचित भागीदारी और योगदान के बिना देश के सर्वांगीण विकास के लक्ष्य को हासिल करना संभव नहीं है।

पाई की अनंतता

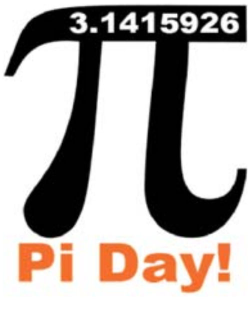

14 मार्च को पाई दिवस (Pi Day) मनाया जाता है। पाई का अधिकतर उपयोग ज्यामिति में होता है। विवरण ज्यामिती में किसी वृत्त की परिधि की लंबाई और व्यास की लंबाई के अनुपात को पाई कहा जाता है। गणित, विज्ञान और अभियांत्रिकी के कई महत्त्वपूर्ण फ़ार्मूले इस पर आधारित हैं। प्रत्येक वृत्त में यह अनुपात 3.141 होता है लेकिन दशमलव के बाद की पूरी संख्या का अब तक आंकलन नहीं किया जा सका है इसलिए इसे अनंत माना जाता है। पाई के इतिहास में जाएं तो पाएंगे कि यह निर्विवाद सत्य है कि पाई के सिद्धान्त के प्रतिपादक आर्यभट्ट थे। इसके बावजूद आर्कीमीडिज से लेकर न्यूटन तक, सबने पाई के बारे में खोज कर अपने-अपने मान दुनिया के सामने रखे थे। भारत के एक अन्य गणितज्ञ ब्रह्मगुप्त भी पाई की खोज को एक नई ऊँचाई तक ले गए। माना जाता है कि मिस्र के पिरामिड का निर्माण करने वालों को पाई का ज्ञान था। हालांकि इसका कोई लिखित प्रमाण उपलब्ध नहीं है।

ज्यामिती में किसी वृत्त की परिधि की लंबाई और व्यास की लंबाई के अनुपात को पाई कहा जाता है। प्रत्येक वृत्त में यह अनुपात 3.141 होता है, लेकिन दशमलव के बाद की पूरी संख्या का अब तक आंकलन नहीं किया जा सका है, इसलिए इसे अनंत माना जाता है। आर्यभट्ट ने इसके सिद्धान्त का प्रतिपादन करते हुए संस्कृत में लिखा है - चतुराधिकं शतमष्टगुणं द्वाषष्टिस्तथा सहस्त्राणाम्। अयुतद्वयस्य विष्कम्भस्य आसन्नौ वृत्तपरिणाहः।।

100 में चार जोड़ें, आठ से गुणा करें और फिर 62000 जोड़ें। इस नियम से 20,000 परिधि के एक वृत्त का व्यास ज्ञात किया जा सकता है। अर्थात एक वृत्त का व्यास यदि 20000 हो, तो उसकी परिधि 62232 होगी। उल्लेखनीय है कि चार दशमलव स्थानों पर सटीक और सही गणना के बावजूद सत्य के प्रति आग्रही आर्यभट्ट इस मान को विशुद्ध नहीं मानते। बल्कि आसन्न (निकट) मानते थे।

पाई बारे में कई रोचक बातें हैं। जापान खाद्य प्रसंस्करण कंपनी में सिस्टम इंजीनियर के तौर पर काम कर रहे 55 वर्षीय शिगेरू कोंडो ने पाई का पूर्ण मान निकालने की लगातार 90 दिनों तक कड़ी मेहनत की लेकिन पाई की गणना खत्म नहीं हुई। इस दौरान उसने दशमलव के बाद पाँच हजार अरब अंकों तक पाई का मान निकाला था। गणितज्ञों का दावा है कि वृत्त की परिधि और व्यास के अनुपात के लिए होने वाला स्थिरांक गलत है और उसकी जगह टाउ का इस्तेमाल होना चाहिए। द टाइम्स अखबार के मुताबिक, पाई का अंकीय मूल्य 3.14159265 होता है जो कि गलत नहीं है लेकिन वृत्त के गुणों के साथ इसे जोड़ना गलत है। उन्होंने इसके लिए टाउ सुझाया है जिसका मूल्य पाई का दोगुना यानी 6.28 है।

गौरैया रानी आ जाओ

20 मार्च को प्रतिवर्ष विश्व गौरैया दिवस (World Sparrow Day) मनाया जाता है। हमारी जानी पहचानी चिड़िया गौरैया (Passer domesticus) जो यूरोप और एशिया में सामान्य रूप से हर जगह पाया जाता है। इसके अतिरिक्त पूरे विश्व में जहाँ-जहाँ मनुष्य गया इसने उनका अनुकरण किया और अमेरीका के अधिकतर स्थानों, अफ्रीका के कुछ स्थानों, न्यूजीलैंड और आस्ट्रेलिया तथा अन्य नगरीय बस्तियों में अपना घर बनाया। शहरी इलाकों में गौरैया की छह तरह ही प्रजातियां पाई जाती हैं। ये हैं हाउस स्पैरो, स्पेनिश स्पैरो, सिंड स्पैरो, रसेट स्पैरो, डेड सी स्पैरो और ट्री स्पैरो। इनमें हाउस स्पैरो को गौरैया कहा जाता है। यह शहरों में ज्यादा पाई

जाती हैं। आज यह विश्व में सबसे अधिक पाए जाने वाले पक्षियों में से है। लोग जहाँ भी घर बनाते हैं देर सबेर गौरैया के जोड़े वहाँ रहने पहुँच ही जाते हैं। यही गौरैया जो हमारे घरों के अंदर और बाहर हमेशा चहचहाती रहती थी। अब कहीं खो सी गई है। अब शहरों में हमारे घरों में अनाज पड़ा रहता है, लेकिन उसे अपनी चोंच में दबाकर फुर्र से अपने घोसले की तरफ उड़ जाने वाले गौरैया अब दिखाई नहीं देती।

जन्तु विशेषज्ञों का कहना है कि किसी भी प्रजाति को खत्म करना हो तो उसके आवास और उसके भोजन को खत्म कर दो। कुछ ऐसा भी हुआ गौरैया के साथ। शहरीकरण, गांवों का बदलता स्वरूप, कृषि में रसायनिक खादें एंव विषाक्त कीटनाशक गौरैया के खत्म होने के लिए जिम्मेंदार बन गये हैं। फिर भी प्रकृति ने हर जीव को विपरीत परिस्थितियों में जिन्दा रहने की काबिलियत दी है और यही वजह है कि गौरैया कि चहक भी हम यदाकदा सुन पा रहे हैं, लेकिन कब तक? इस प्रश्न चिन्ह पर भी हमें ध्यान रखना होगा। अन्यथा गिद्ध की तरह गौरैया को भी हमारे बीच से विलुप्त होते देर नहीं लगेगी।

पारिस्थितिकी में परिंदों का बहुत योगदान है, ये परिन्दे ही जंगल लगाते है, कई प्रजातियों के वृक्ष तो तभी उगते है, जब कोई परिन्दा इन वृक्षों के बीजों को खाता है और वह बीज उस पक्षी की आहारनाल से पाचन की प्रक्रिया से गुजर कर जब कही गिरते है तभी उनमें अंकुरण होता है, साथ ही फलों को खाकर धरती पर इधर-उधर बिखेरना और परागण की प्रक्रिया में सहयोग देना इन्ही परिन्दों का अप्रत्यक्ष योगदान है। कीट-पंतगों की तादाद पर भी यही परिन्दे नियन्त्रण करते है, कुल मिलाकर पारिस्थितिकी तन्त्र में प्रत्येक प्रजाति का अपना महत्व है, हमें उनके महत्व को नज़रन्दाज़ करके अपने पर्यावरण के लिए सही नहीं कर रहे।

विश्व गौरैया दिवस को लेकर पिछले कुछ वर्षों से स्कूलों-कॉलेजों में आयोजन हो रहे हैं और बच्चों को इनके प्रति जागरूक बनाया जा रहा है। बच्चों को गौरैया संरक्षण के लिए गौरैया होम भी वितरित किये जा रहे हैं, जो एक सराहनीय प्रयास है। हम अपने घरों के अहाते और पिछवाड़े विदेशी नस्ल के पौधों के बजाए देशी फलदार पौधे लगाकर इन चिड़ियों को आहार और घरौदें बनाने का मौका दे सकते है। साथ ही जहरीले कीटनाशक के इस्तेमाल को रोककर, इन वनस्पतियों पर लगने वाले परजीवी कीड़ो को पनपने का मौका देकर इन चिड़ियों के चूजों के आहार की भी उपलब्धता करवा सकते है, क्योंकि गौरैया जैसे परिन्दों के चूजें कठोर अनाज को नही खा सकते, उन्हे मुलायम कीड़े ही आहार के रूप में आवश्यक होते हैं। इसके अतिरिक्त अपने घरों में सुरक्षित स्थानों पर गौरैया के घोसले बनाने वाली जगहों या मानव-जनित लकड़ी या मिट्टी के घोसले बनाकर लटकाये जा सकते है। एक बात और, पानी और अनाज के साथ पकाए हुए अनाज का विखराव कर हम इस चिड़िया को दोबारा अपने घर-आंगन और छपों पर बुला सकते हैं।

शहरों में जंगल की बात

21 मार्च को प्रतिवर्ष अंतर्राष्ट्रीय वानिकी दिवस (International Day of Forests) मनाया जाता है। विश्व वानिकी दिवस मनाने का विचार वर्ष 1971 में यूरोपीय कृषि परिसंघ की 23वीं महासभा में आया। वानिकी के तीन महत्वपूर्ण तत्वों-सुरक्षा, उत्पादन और वनविहार के बारे में लोगों को जानकारियां देने के लिए उसी साल बाद में 21 मार्च के दिन को चुना गया। यह दिवस पहली बार इस उद्देश्य से मनाया गया था कि दुनिया के तमाम देश अपनी वन-सम्पदा की तरफ ध्यान दें और वनों को संरक्षण प्रदान करें, साथ ही अपनी मातृभूमि की मिट्टी और वन सम्पदा का महत्व समझें तथा अपने-अपने देश के वनों और जंगलों का संरक्षण करें।

वनों के लाभ से हम सब परिचित हैं। पेड-पौधे पृथ्वी के लिए सुरक्षा कवच का काम करते हैं और जंगली जंतुओं को आश्रय प्रदान करने के हमें दवा, लकड़ी और ईंधन आदि प्रदान करते हैं। पेड़ों की जड़ें मिट्टी को जकड़े रखती है और इस प्रकार वह भारी बारिश के दिनों में मृदा का अपरदन और बाढ भी रोकती हैं। पेड़, कार्बन डाइ ऑक्साइड अवशोषित करते हैं और ऑक्सीजन छोड़ते हैं जिसकी मानवजाति को सांस लेने के लिए जरूरत पड़ती है। वनस्पति स्थानीय और वैश्विक जलवायु को प्रभावित करती है। वे सभी जीवों को सूर्य की गर्मी से बचाते हैं और पृथ्वी के तापमान को नियंत्रित करते हैं। वन प्रकाश का परावर्तन घटाते हैं, ध्वनि को नियंत्रित करते हैं और हवा की दिशा को बदलने एवं गति को कम करने में मदद करते हैं।

भारत में वन महोत्सव जुलाई 1950 से ही मनाया जा रहा है। इसकी शुरुआत तत्कालीन गृहमंत्री कुलपति कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी ने की थी। वर्तमान समय में भारत 19.39 प्रतिशत भूमि पर वनों का विस्तार है और छत्तीसगढ़ राज्य में सबसे अधिक वन-सम्पदा है उसके बाद क्रमशः मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश राज्य में। भारत सरकार द्वारा वर्ष 1952 में निर्धारित राष्ट्रीय वन नीति के तहत देश के 33.3 प्रतिशत क्षेत्र पर वन होने चाहिए। लेकिन

वर्तमान समय में ऐसा नहीं है। वन-भूमि पर उद्योग-धंधों तथा मकानों का निर्माण, वनों को खेती के काम में लाना और लकड़ियों की बढती माँग के कारण वनों की अवैध कटाई आदि वनों के नष्ट होने के प्रमुख कारण है। इसलिए अब समय आ गया है कि देश की राष्ट्रीय निधि को बचाए और इनका संरक्षण करें। आज विश्व वानिकी दिवस और पर्यावरण दिवस जैसे आयोजनों से विश्व में पेड़-पौधों को बचाने की मुहिम छिड़ी है। इस पुनीत कार्य में हम भी सहभागी बनना चाहिए।

कुछ लोग ऐसे भी होते हैं

प्रतियोगिता के इस दौर की आपाधापी की जीवनशैली तनाव को जन्म दे रही है और तनाव अपनी हदें पार कर किसी को चोट पहुंचाने तक से बाज़ नहीं आता, फिर चोट चाहें मानसिक हो या शारीरिक। यह तो हो गई दूसरों को चोट पहुँचाने की बात, लेकिन इस दुनिया में कुछ लोग ऐसे भी होते हैं, जो स्वयं को चोट पहुँचाने से बाज़ नहीं आते! दुनिया में ऐसे ही लोगों को लेकर 1 मार्च को एक दिवस मनाया जाता है, जिसका नाम है-स्वयं को चोट पहुँचाने का जागरूकता दिवस (Self-injury Awareness Day)। आत्मघात या खुद को चोट पहुँचाना आज भी एक बड़ी अनसुलझी स्थिति है। यह स्थिति सभी प्रकार के लोगों के समक्ष आ सकती है चाहे वे किसी भी धर्म, उम्र या नस्ल के हों। परंतु फिर भी इस विषय पर जानकारी के आभाव के कारण बहुत से लोग अभी भी यह नहीं जानते की इस स्थिति से कैसे निपटा जा सकता है और ऐसी परिस्थिति में अपने सगे सम्बन्धियों या दोस्तों की कैसे सहायता करें।

जानबूझकर, किन्तु आत्महत्या के इच्छा से नहीं, अपने शरीर को क्षति पहुँचाना आत्मक्षति (Self-harm (SH) या deliberate self-harm (DSH)) कहलाता है। मैंने कई महिलाओं को गुस्से में अपने बाल नोचते हुए देखा है और कई लोगों को बात-बात पर धमकी देते हुए सुना है कि अगर उनके मन की नहीं हुई तो वे अपने शरीर को नुकसान पहुँचा लेंगे। उनकी यह बात सिर्फ धमकी नहीं होती बल्कि अकसर ऐसे लोग अपने शरीर को अपने दातों से चाब डालते हैं या ब्लेड से काट डालते हैं। वे ऐसा अपने को खत्म करने के लिए नहीं करते बल्कि अपने को दर्द पहुँचाने के लिए करते हैं। कुछ लोगों को अपने उंगलियों के नाखून चाबने से होने वाला दर्द अच्छा लगता है तो कुछ को अपने जिस्म पर टैटू बनवाने से होने वाला दर्द अच्छा लगता है। यही नहीं मेरे एक उच्च्य शिक्षित मित्र हैं। जब वे अकेले होते हैं और अपने काम में मशगूल होते हैं, उनसे कोई ग़लती हो जाने पर उन्हें अपने सिर पर ज़ोरदार चपत लगाते हुए देखा है। चपत संभवतः इतनी ज़ोर की होती होगी कि किसी आम आदमी के पड़ जाए तो उसका सिर धूम जाए।

आत्मघात उस स्थिति को कहते हैं जब कोई अपने शरीर को इस प्रकार चोट पहुँचाने की कोशिश करता है, कि वह आवेगशील तो होता है परंतु खतरनाक नहीं होता। ज्यादातर स्थिति में ऐसे व्यक्ति द्वारा स्वयं पर किये गए प्रहारों के निशान प्रत्यक्ष होते हैं। मनोवैज्ञानिक बताते हैं कि यद्यपि ये आत्महत्या के प्रयास के तौर पर नहीं देखा जा सकता, आत्मघात भावनात्मक पीड़ा, दबे हुए गुस्से और चिड़चिड़ेपन से निपटने का एक अस्वस्थ तरीका है। इस दिवस के सन्दर्भ में बात की जाए तो स्वयं को आहत करने के मुद्दे पर जागरूकता फैलाना अत्यंत आवश्यक है। ऐसा करने से पीड़ित को समझने में मदद मिलेगी और राय बनाने या भय से बचने में भी सहायता मिलेगी। इस जागरूकता से अकेलेपन से जूझ रहे लोगों और चुपचाप इस परेशानी को झेल रहे लोगों में कमी आएगी। ऐसे लक्षण स्वयं में महसूस होने पर कतराएं नहीं, अपनी करीबियों से सहायता लें और जरूरत पड़े तो मानसिक चिकित्सक यानी साइकैट्रिस्ट की भी सहायता लें।

निराशा का स्वयं को चोट पहुँचाने से गहरा संबंध है। निराशा एक स्थिति है जो निम्न मनोदशा और काम के प्रति अरुचि को दर्शाती है। उदास व्यक्ति दुखी, उत्सुक हो सकता है, खाली, बेबस, बेकार, दोषी, चिड़चिड़ा या बेचैन होता है। मनोरोग के कई लक्षण में से निराशा को एक मुख्य लक्षण माना जाता है। निराशा को रोगों के समूह में मनोदशा को प्राथमिक बाधा पहुँचाने वाला माना जाता है। निराशा मस्तिष्क (न्यूरोट्रांसमीटर) में जैव-रासायनिक परिवर्तन के साथ जुड़ी हुई है, जो तंत्रिका कोशिकाओं को संवाद करने में मदद कराती है जैसे सेरोटोनिन दोपमिने और नोरेपिनेफ्रिने। इन न्यूरोट्रांसमीटर को आनुवांशिकी, हार्मोनल परिवर्तन, दवाओं के लिए प्रतिक्रिया, उम्र बढ़ना, मस्तिष्क चोटे और मौसमी प्रकाश चक्र में परिवर्तन से प्रभावित हो सकते हैं। जो भी हमें ऐसे लोगों से दोस्ताना व्यवहार रखना चाहिए, उन्हें समझना और समझाना चाहिए और ज़रूरी हो तो चिकित्सी सहायता भी उपलब्ध कराना चाहिए क्योंकि ये लोग भी हमारे समाज का अंग हैं।

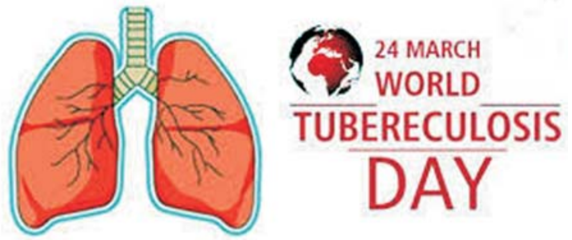

आओ पानी बचाएं

22 मार्च को प्रतिवर्ष विश्व जल दिवस (World Water Day) मनाया जाता है। पानी हमारे जीवन की आधार शिला है और पानी से ही पृथ्वी ग्रह को पानी की उपस्थिति के कारण ही इसे जीवित ग्रहों की श्रेणी में रखा गया है। हमारा ग्रह अधिकांशतः जल से धिरा हुआ है, लेकिन फिर भी यहां पीने लायक पानी की कमी महसूस की जाने लगी है। यही कारण है कि ब्राज़ील में रियो डि जेनेरियो में वर्ष 1992 में आयोजित पर्यावरण तथा विकास का संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन विश्व जल दिवस की पहल में की गई। वर्ष 1993 में संयुक्त राष्ट्र ने अपने सामान्य सभा के द्वारा निर्णय लेकर इस दिन को वार्षिक कार्यक्रम के रूप में मनाने का निर्णय लिया इस कार्यक्रम का उद्देश्य लोगों के बीच में जल संरक्षण का महत्व साफ पीने योग्य जल का महत्व आदि बताना था। पानी के महत्व को जानने का दिन और पानी के संरक्षण के विषय में समय रहते सचेत होने का दिन।

पृथ्वी का लगभग 71 प्रतिशत सतह को 1.460 पीटा टन (पीटी) (1021 किलोग्राम) जल से आच्छदित है जो अधिकतर महासागरों और अन्य बड़े जल निकायों का हिस्सा होता है इसके अतिरिक्त, 1.6 प्रतिशत भूमिगत जल एक्वीफर और 0.001 प्रतिशत जल वाष्प और बादल (इनका गठन हवा में जल के निलंबित ठोस और द्रव कणों से होता है) के रूप में पाया जाता है। खारे जल के महासागरों में पृथ्वी का कुल 97 प्रतिशत, हिमनदों और ध्रुवीय बर्फ चोटिओं में 2.4 प्रतिशत और अन्य स्रोतों जैसे नदियों, झीलों और तालाबों में 0.6 प्रतिशत जल पाया जाता है। बर्फीली चोटिओं, हिमनद व झीलों का जल कई बार धरती पर जीवन के लिए साफ जल उपलब्ध कराता है।

आँकड़े बताते हैं कि विश्व के 1.5 अरब लोगों को पीने का शुद्ध पानी नही मिल रहा है। प्रकृति जीवनदायी संपदा जल हमें एक चक्र के रूप में प्रदान करती है, हम भी इस चक्र का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। चक्र को गतिमान रखना हमारी जिम्मेदारी है, चक्र के थमने का अर्थ है, हमारे जीवन का थम जाना। प्रकृति के ख़जाने से हम जितना पानी लेते हैं, उसे वापस भी हमें ही लौटाना है। अतः प्राकृतिक संसाधनों को दूषित न होने दें और पानी को व्यर्थ न गँवाएँ यह प्रण लेना आज के दिन बहुत आवश्यक है।

ज़िन्दगी जीने के लिए

24 मार्च को प्रतिवर्ष विश्व तपेदिक दिवस (World Tuberculosis Day) मनाया जाता है। तपेदिक अथवा क्षयरोग या टीबी (Tubercle bacillus का लघु रूप) एक आम और कई मामलों में घातक संक्रामक बीमारी है जो माइक्रोबैक्टीरिया, आमतौर पर माइकोबैक्टीरियम तपेदिक के विभिन्न प्रकारों की वजह से होती है।

क्षय रोग का इतिहास बहुत प्राचीन है। कंकालों के अवशेष दर्शाते है कि प्रागैतिहासिक मानवों (4000 ई.पू.) को टीबी था और शोधकर्ताओं को 3000-2400 ईसा पूर्व की मिस्र की ममियों में तपेदिकीय क्षय मिले हैं। क्षय रोग आम तौर पर फेफड़ों पर हमला करता है, लेकिन यह शरीर के अन्य भागों को भी प्रभावित कर सकता हैं। यह हवा के माध्यम से तब फैलता है, जब वे लोग जो सक्रिय टीबी संक्रमण से ग्रसित हैं, खांसी, छींक, या किसी अन्य प्रकार से हवा के माध्यम से अपना लार संचारित कर देते हैं। ज़्यादातर संक्रमण स्पर्शोन्मुख और भीतरी होते हैं, लेकिन दस में से एक भीतरी संक्रमण, अंततः सक्रिय रोग में बदल जाते हैं, जिनको अगर बिना उपचार किये छोड़ दिया जाये तो ऐसे संक्रमित लोगों में से 50 प्रतिशत से अधिक की मृत्यु हो जाती है।

सक्रिय टीबी संक्रमण के आदर्श लक्षण खून-वाली थूक के साथ पुरानी खांसी, बुखार, रात को पसीना आना और वज़न घटना हैं। इसका निदान रेडियोलॉजी, आम तौर पर छाती का एक्स-रे, के साथ-साथ माइक्रोस्कोपिक जांच तथा शरीर के तरलों की माइक्रोबायोलॉजिकल कल्चर पर निर्भर करता है। भीतरी या छिपी टीबी का निदान ट्यूबरक्यूलाइन त्वचा परीक्षण और रक्त परीक्षणों पर निर्भर करता है। फुफ्फुसीय तपेदिक के सुझाये गये छः मास के उपचार में पहले दो माह तक रिफैम्पिसिन, आइसोनियाजिड, पाइराजिनामाइड और एथेमब्यूटह्ल जैसी एंटीबायोटिक के संयोजन उपयोग किया जाता है तथा बाद के चार माह में केवल रिफैम्पिसिन और आइसोनिजिड का उपयोग किया जाता है। जिन मामलों में आइसोनियाजिड के लिये उच्च प्रतिरोध होता है, उनमें बाद के चार माहों में एथेमब्यूटॉल जोड़ा जा सकता है। अमेरिका मे हुए एक नए शोध में वैज्ञानिकों का दावा है कि मां का दूध नवजात की प्रतिरोधी क्षमता में उसी तरीके से बढ़ोतरी करता है जिस प्रकार क्षय रोग (टीबी) जैसे रोगों के खिलाफ टीकाकरण काम करता है।

research.rog@rediffmail.com

AISECT

Education. Empowerment. Enterprise.

संस्थागत समाचार

मानव की विकास यात्राः चकमक पत्थर से आधुनिक विज्ञान तक

विज्ञान प्रदर्शनी का अवलोकन करते कुलपति डॉ.ए.के. ग्वाल एवं अन्य

मनुष्य जाति के लाखों वर्षो की विकास यात्रा में बहुतेरे पड़ाव आए हैं। चकमक पत्थर से आग का आविष्कार या पत्थरों के औजार-हथियार बनाना मनुष्य के पहले वैज्ञानिक कौशल थे तो वह यात्रा चलते चलते आज राकेट और उपग्रहों तक आ पहुंची है। विज्ञान के विकास के पड़ाव दर पड़ाव मनुष्य ने अपनी लंबी यात्रा में अथक श्रम और संघर्ष के मूल्यों में विश्वास करके तय किए है।

राष्ट्रीय विज्ञान दिवस के अवसर पर रबीन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय (आईसेक्ट विश्वविद्यालय) भोपाल में "मनुष्य की विकास यात्रा : पाषाण से विज्ञान तक" विषयक प्रदर्शनी एवं व्याख्यान आयोजन संपन्न हुए। इस अवसर पर विश्वविद्यालय के छात्रों ने प्रदर्शनी का अवलोकन किया जिसमें पुरातन काल के पत्थरों के औजार-हथियार, मिटटी के बर्तन, ईटें, फॉसिल्स आदि के बारे में विस्तार से जानकारी प्राप्त की। इस अवसर पर पुरातत्वविद डॉ. नारायण व्यास और सेंटर फॉर साइंस कम्युनिकेशन के निदेशक राग तेलंग ने छात्रों से संवाद किया। विज्ञानवेत्ता राग तेलंग ने यह समझाया कि मनुष्य प्रजाति ने अपने कामों की जटिलता कम करने और समय बचाने के लिए अपनी लाखों वर्षो की विकास यात्रा में पत्थरों से औजार,हथियार और उपकरण बनाए। इस यात्रा को समझना एक तरह से खुद को समझना है। विज्ञान और कला के नजरिये से देखने पर अदृश्य मगर सुन्दर दुनिया को देखा जा सकता है। जरुरत सिर्फ धैर्य और विज़न की है। समाज में विज्ञान चेतना के प्रसार से वैज्ञानिक शोध कार्यो के लिए वातावरण स्थापित होने से ही हम एक उन्नत और विकसित देश की कल्पना कर सकते हैं। युवाओं के दृष्टिकोण से कहा जाए तो वैज्ञानिक सोच के व्यक्तित्व में शामिल होने से उन्हें कई तरह से मदद मिलती है। विज्ञान दिवस के अवसर पर सेंटर फॉर साइंस कम्युनिकेशन द्वारा तैयार नोबेल पुरस्कार प्राप्त चार भारतीय वैज्ञानिकों के आविष्कारों और उनकी संपूर्ण जानकारी प्रस्तुत करने वाले चार नयनाभिराम पोस्टर भी प्रदर्शित किए गए। इस अवसर पर रबीन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय के कुलाधिपति संतोष चौबे भी उपस्थित थे और उन्होंने छात्रों की जिज्ञासु प्रवृत्ति और उनकी सक्रिय सहभागिता की सराहना की। विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ.ए.के.ग्वाल, कुलसचिव डॉ. विजय सिंह एवं इलेक्ट्रॉनिकी के सह-संपादक मोहन सगोरिया एवं रवीन्द्र जैन भी इस अवसर पर उपस्थित थे। इस मौके पर विज्ञान संकाय व राष्ट्रीय सेवा योजना के सामंजस्य में विद्यार्थियों को बेहतर प्रशिक्षण हेतु 'मशरुम खेती का केन्द्र' का उद्घाटन किया गया। डॉ. शगुप्ता खान एवं श्रीजी सेठ बतौर विषय विशेषज्ञ उपस्थित रहे।

''रिवाइविंग इंडिया एज़ द विश्वगुरू'' का गरिमामय समापन

भोपाल के स्कोप कॉलेज ऑफ इंजीनियरिंग में चल रहे दो दिवसीय नेशनल कॉफ्रेंस ''रिवाइविंग इंडिया एज़ द विश्वगुरु'' का गरिमामय तरीके से समापन हुआ। इस कार्यक्रम में महाविद्यालय ने अपनी परम्पराओं का निर्वहन करते हुये विद्यार्थियों के अभिभावकों को मुख्य अतिथि बनाकर उनको सम्मानित किया गया। इस कॉफ्रेंस में प्रतिभागियों द्वारा दिये गये पेपर प्राचीन शिक्षा शास्त्र से नवीनतम शिक्षा शास्त्र, व्यापार प्रबंधन, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी, कला, विरासत संस्कृति एवं साहित्य तथा भारतीय सरकार द्वारा संचालित नवीनतम योजनायें जैसे विषयों पर आधारित थे। पेपर्स का प्रस्तुतिकरण मंच द्वारा किया गया। यह प्रस्तुतिकरण चार भागों में हुआ, दो तकनीकी और दो गैर तकनीकी। हर सेशन में बेस्ट पेपर प्रेजेंटेशन अवार्ड दिया गया। विद्यार्थियों ने अपना बेहतरीन परफोर्मेंस देते हुए की-नोट स्पीकर, मंच संचालन जैसे कार्यों को अंजाम दिया। अभिभावक भी अभिभूत नज़र आये एवं स्कोप कॉलेज ऑफ इंजीनियरिंग के प्रयासों को सराहा। इस भव्य कार्यक्रम के समापन दिवस पर गेस्ट ऑफ ऑनर के रूप में एम.टेक (डी.सी) के टॉपर छात्र धीरज कुमार तथा एम.बी.ए. की छात्र प्रिया मंडल के पिता प्रशांत मंडल जी थे। मुख्य अतिथि के रूप में देवीलाल नामदेव जी को आमंत्रित

किया गया जो कि डिप्लोमा (ई.एक्स) के टॉपर छात्र सुरेन्द्र नामदेव के पिता जी है। की-नोट स्पीकर के रूप में बी.ई के टॉपर छात्र सिंह रमेश विमल कुमार मंच पर उपस्थित थे। कार्यक्रम में नूतन कॉलेज के प्रोफेसर डॉ. अशोक नेमा जी ने बेहद ही रोचक तरीके से पंचतत्व के बारे में बताया उनके वक्तव्य को सभी ने मंत्रमुग्ध होकर सुना। कार्यक्रम का समापन राष्ट्रगीत से किया गया। इस अवसर पर संस्था के ग्रुप संचालक डॉ.डी.एस.राघव ने सभी फैकल्टी, छात्र-छात्राओं व आयोजको की प्रशंसा की और भविष्य में भी इस तरह के आयोजनो के लिये प्रेरणा दी। उन्होंने कहा कि हमें सबसे पहले अपने माता-पिता व गुरूजनों का आर्शीवाद लेकर कोई कार्य करना चाहिये जो हमेशा उन्नति व प्रगति के लिये अग्रसर करता है। कार्यक्रम की आयोजिका डॉ. मोनिका सिंह ने सभी अभिभावकों व छात्रों को बधाई दी तथा कार्यक्रम की सफलता का श्रेय सभी विद्यार्थियों व संबंधित फैकल्टियों को दिया।

उत्कृष्ट परिणाम

स्कोप कॉलेज ऑफ इंजीनियरिंग के छात्रों ने ऊँचाईयों को छूने का सतत प्रयास किया है, हाल ही में घोषित परीक्षा परिणामों में इन्जीनियरिंग के सभी विभागों के छात्रों ने बेहतरीन रिजल्ट लाकर अपनी उत्कृष्टता का पुनः परिचय दिया। आर.जी.पी.वी. द्वारा घोषित विभिन्न परिणामों में प्रमुख रूप से बी.टेक प्रथम सेमेस्टर में सी.एस. विभाग की खुशबू अग्रवाल 8.13 एस.जी.पी.ए. के साथ टॉप पर, प्राप्ति शर्मा 8.07 एस.जी.पी.ए. के साथ द्वितीय स्थान पर रहे। बी.टेक प्रथम सेमेस्टर में एम.ई विभाग के मोहम्मद तौहीद 7.13 एस.जी.पी.ए. के साथ प्रथम स्थान पर रहे। बी.टेक प्रथम सेमेस्टर में ई.एक्स विभाग के मीतेश सिंह राजपूत 7.13 एस.जी.पी.ए. के साथ टॉप पर रहे। बी.टेक तृतीय सेमेस्टर में सी.एस. विभाग के संकेत रॉय 7.31 एस.जी.पी.ए. के साथ प्रथम स्थान पर एवं सुनीता हुरमड़े 7.13 एस.जी.पी.ए. के साथ द्वितीय स्थान को प्राप्त किया। बी.टेक तृतीय सेमेस्टर में ई.एक्स विभाग की वर्षा 7.06 एस.जी.पी.ए. के साथ प्रथम स्थान पर रही तो वहीं बी.टेक तृतीय सेमेस्टर में एम.ई विभाग के सूरज सियाराम सिंह 8.0 एस.जी.पी.ए. के साथ प्रथम स्थान पर, पवन कुमार डे 7.69 एस.जी.पी.ए. के साथ द्वितीय स्थान पर रहे। बी.टेक तृतीय सेमेस्टर में ई.सी. विभाग के जितेन्द्र कीर 7.63 एस.जी.पी.ए. के साथ प्रथम स्थान पर एवं प्रीति सिरसोदे 7.06 एस.जी.पी.ए. के साथ द्वितीय स्थान पर रही।

बी.टेक पंचम सेमेस्टर में सी.एस. विभाग के उमेश रजक 7.88 एस.जी.पी.ए. के साथ प्रथम स्थान पर एवं रूबी चौरसिया 7.69 एस.जी.पी.ए. के साथ द्वितीय स्थान पर रही। बी.टेक पंचम सेमेस्टर में एम.ई. विभाग के अजय कुशवाहा 7.88 एस.जी.पी.ए. के साथ प्रथम स्थान पर एवं मिन्टू कुमार 7.81 एस.जी.पी.ए. के साथ द्वितीय स्थान पर रहे। ई.एक्स विभाग के धर्मेन्द्र डोंगरे 7.56 एस.जी.पी.ए. के साथ प्रथम स्थान एवं मृत्युंजय पाटीदार 7.25 एस.जी.पी.ए. के साथ द्वितीय स्थान पर रहे। इस अवसर पर संस्था के डीन एकेडमिक राजकुमार पाण्डे ने सभी छात्रों को हार्दिक बधाई एवं शुभकामनायें दी और उन्हें जीवन में ऊँचे से ऊँचे लक्ष्य हासिल करने की प्रेरणा भी दी। संस्था के ग्रुप संचालक डॉ.डी.एस.राघव ने सभी उत्कृष्ट परिणाम लाने वाले छात्रों को उनके उज्ज्वल भविष्य की बधाई दी साथ में सभी अन्य छात्रों को भी सफल छात्रों की कार्य प्रणाली का हवाला देते हुये उनका अनुसरण करने की प्रेरणा दी।

❑❑❑

वार्षिक घोषणा

समाचार पत्र का नाम	: इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए
भाषा जिसमें प्रकाशित किया जाता है	: हिन्दी
प्रकाशन की समयावधि	: मासिक
प्रकाशक का नाम	: सिद्धार्थ चतुर्वेदी
राष्ट्रीयता	: भारतीय
पता	: स्कोप कैम्पस एनएच.-12, होशंगाबाद रोड, भोपाल-47
संपादक का नाम	: संतोष चौबे
राष्ट्रीयता	: भारतीय
पता	: इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए, स्कोप कैम्पस एनएच.-12, होशंगाबाद रोड, भोपाल-47
मुद्रणालय जहाँ मुद्रण	: पहले पहल प्रिंटरी 25A, प्रेस कॉम्प्लेक्स, जोन-1, एमपी.नगर, भोपाल (म.प्र.)

उपर्युक्त समस्त जानकारी सही दी गयी है।

सिद्धार्थ चतुर्वेदी
स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक

www.electroniki.com

राष्ट्रीय राजभाषा शील्ड सम्मान, रामेश्वर गुरु पुरस्कार, भारतेन्दु पुरस्कार और सारस्वत सम्मान से सम्मानित

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका

सदस्यता फार्म

1. नाम : ....

2. स्कूल का नाम (यदि छात्र हो) : ....

3. संस्था का पता (जहाँ कार्यरत हैं) : ....

4. घर का पता : ....

5. फोन/ मोबाइल : ....

6. ई-मेल : ....

मैं 'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' का वार्षिक/द्विवार्षिक/त्रैवार्षिक सदस्य बनना चाहता/चाहती हूँ। माह .... से प्रारम्भ वार्षिक/द्विवार्षिक/त्रैवार्षिक सदस्यता शुल्क ..../- (मात्र) ड्रॉफ्ट/चेक द्वारा भेज रहा/रही हूँ। कृपया पत्रिका घर/संस्था के पते पर भेजें।

भुगतान 'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' नाम से देय होगा।

क्रमांक .... दिनांक.................................... राशि.......................

बैंक का नाम..

हस्ताक्षर

वार्षिक शुल्क- ₹ 480/-, द्विवार्षिक शुल्क-₹ 960/-, त्रैवार्षिक शुल्क-₹ 1400/-
एक अंक ₹ 40/- मात्र

पत्र व्यवहार का पता

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

एन.एच.-12, होशंगाबाद रोड, मिसरोद से आगे, भोपाल-47, फोन : 0755-6766166/ 6766104/2432801

मोबाइल : 09630725033, 0889556622

फैक्स : 0755-6766110

ई-मेल : electroniki@electroniki.com

वेबसाइट : www.electroniki.com

AISECT
Education. Empowerment. Enterprise.

www.electroniki.com

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका

विज्ञापन की दरें

अंतिम पृष्ठ	रंगीन	₹ 1,00,000
पिछला पृष्ठ (कवर-3)	रंगीन	₹ 80,000
भीतरी पृष्ठ (कवर-2)	रंगीन	₹ 80,000
संपूर्ण पृष्ठ	श्वेत-श्याम	₹ 40,000
अर्ध पृष्ठ	श्वेत-श्याम	₹ 30,000
एक चौथाई	श्वेत-श्याम	₹ 20,000

महत्वपूर्ण बिंदु

- विज्ञापन प्रत्येक माह की 30 तारीख तक भेजा जाना अनिवार्य है।
- विज्ञापन PDF या JPEG फार्मेट में भेजा जा सकता है

अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें

AISECT Publications

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

एन.एच.-12, होशंगाबाद रोड, मिसरोद से आगे, भोपाल-47, फोन : 0755-6766166/ 6766104/2432801
मोबाइल : 09630725033, 0889556622
फैक्स : 0755-6766110
ई-मेल : electroniki@electroniki.com
वेबसाइट : www.electroniki.com